रामाश्रम सत्संग प्रकाशन

संत-प्रसादी

(भाग-6)

अध्यक्ष, रामाश्रम सत्संग

डा. करतार सिंह जी

के प्रवचनों का संकलन

रामाश्रम सत्संग (रजि.)

9-रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड,

गाजियाबाद-201009 (उ.प्र.)

Scanned by CamScanner

रामाश्रम सत्संग प्रकाशन

संत-प्रसादी

(भाग-6)

अध्यक्ष, रामाश्रम सत्संग

डा. करतार सिंह जी

के प्रवचनों का संकलन

रामाश्रम सत्संग (रजि.)

9-रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड,

गाज़ियाबाद-201009 (उ.प्र.)

Scanned by CamScanner

भंडारा और उसका महत्व

आप दूर-दूर से पधारे हैं। आजकल महंगाई के दिन है। खर्चा भी काफी होता है। इसलिए हमें गम्भीरता से मनन करना है, कि हम कौन सा ध्येय लेकर इस सत्संग में सम्मिलित हुए हैं। विश्व का प्रत्येक व्यक्ति शान्ति चाहता है, आनंद चाहता है। परन्तु वह दुख नहीं चाहता। ऐसी स्थिति कैसे प्राप्त हो इस विषय पर विस्तार से बोलने के लिए काफी समय चाहिए। मैं संक्षिप्त में आपकी सेवा में निवेदन करूंगा। कुछ लोगों ने गंगा मैया से पूछा कि क्या कारण है कि जो लोग गंगा स्नान करते हैं, वो पवित्र हो जाते हैं, बाहर से भी और भीतर से भी। गंगा माई क्या उत्तर देती है, उनकी दीनता देखिए, सरलता देखिए, वो उत्तर देती हैं कि मैं कुछ नहीं करती, महापुरुष आते हैं, स्नान करते हैं, उनके शरीर से जल छूता है और वो जल पवित्र हो जाता है। जिज्ञासु लोग आते हैं वो उस पानी में, उस जल में स्नान करते हैं तो वो भी पवित्र हो जाते हैं। ये संत समागम जो है यह भी एक गंगा स्नान करने के बराबर महत्त्व रखता है। चाहे हरिद्वार में जाऐं, चाहे गढ़मुक्तेश्वर जाऐं, चाहे वाराणसी जाएं, वही गंगा माँ है। देश में उसी की पूजा होती है। काहे के लिए? कि वो अति निर्मल हैं, और जो भी व्यक्ति उसके सम्पर्क में आता है, उसमें डुबकी लगाता है, भीतर और बाहर से व्यक्ति निर्मल हो जाता है। कैसी निर्मलता? हम जितने लोग हैं बाहर से भले ही जितने सुन्दर वस्त्र पहने हों, अच्छे लगते हों, परन्तु भीतर में हम नीचों से भी नीच हैं। महापुरुष हिचकिचाते नहीं हैं, जब वो कहते हैं:-

Scanned by CamScanner

कह नानक मैं नाही कोऊ गुण,
राख लेओ सरनाई

हे प्रभु! मेरे में कोई गुण नहीं हैं, जिसके आधार पर मैं आपसे भिक्षा मांगू, झोली फैलाऊँ। केवल एक ही प्रार्थना कर सकता हूँ कि हे सच्चे पिता! आप मेरे दोष मत देखो, केवल अपने चरण में जगह दे दो।

हमारे देश की जो संस्कृति है, वो स्त्रियों पर आधारित है। विवाह पर तथा उसके पश्चात् वो पति के सम्मुख अपने आपको तन, मन, धन से समर्पित कर देती है। मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तेरा, तेरा तुझको सौंपते क्या लागे है मेरा। ये दार्शनिक बात भले सब लोगों को अच्छी लगती हो, परन्तु व्यवहार में केवल हमारे देश की स्त्रियाँ ही कर पाती हैं। ठीक है, आज के समय में परिवर्तन आ रहा है। वो बात जो आज से 50 साल पहले, या कुछ और पहले, बहनों से हमें जो प्रेरणा मिलती थी, वो नहीं है, परन्तु उनमें वो गुण अभी भी प्रकाशित हो रहे हैं। वह अपना शरीर, अपना मन, अपना तन, धन सब कुछ पति के चरणों में समर्पित कर देती है।

पार्वती जी ने कितनी तपस्या की भगवान शिव को प्राप्त करने के लिए। मायके में उच्च कोटि के पिता राजा है। राज दरबार के सब सुख छोड़ दिये। जंगलों में जाकर तपस्या कर रही हैं। काहे के लिए, अपना शरीर, अपना मन, और जो भी कुछ अपना है सब भगवान शिव को अर्पण कर देना है और भीतर से बिल्कुल शून्य हो जाना है, कुछ भी न हो। ऊँ तत् सत्, कुछ नहीं सिवाय परम पिता परमात्मा के। भीतर में ऐसी शून्यता आ जाए कि सिवाए भगवान शिव के कुछ रहे ही नहीं।

Scanned by CamScanner

लक्ष्मी जी ने वरमाला डाल दी विष्णु जी के गले में। स्वयंवर समाप्त हुआ, शादी हो गई, विवाह हो गया। लक्ष्मी जी चरणों में बैठ गई हैं और भगवान से प्रार्थना करती हैं कि मुझसे आप कभी मत पूछिएगा कि मुझे क्या चाहिए। ईश्वर को कह रही हैं, मुझे कुछ नहीं चाहिए। मुझे आज्ञा दीजिए कि मैं सदा आपके चरणों में बैठी रहूँ और चरण दबाती रहूँ।

ये व्यवहार या ये आचरण पुरुषों में बहुत कम है, या है ही नहीं। तो कहने का भाव मेरा यह है कि सच्चे जिज्ञासु को अपने हृदय को संवेदनशील बनाना है। प्रभु की कृपा तो सब पर एक जैसी बरस रही है। वृष्टि हो रही है।

झिम-झिम बरसे अमृत धारा

यह आत्मा की धार जो है सब स्थानों पर, सब व्यक्तियों पर, वनस्पति पर, पत्थर पर, वृष्टि हो रही है, बारिश हो रही है। परन्तु उस वृष्टि को कौन ग्रहण कर पायेगा? जिसका हृदय कोमल होगा, जिसका हृदय संवेदनशील होगा।

इस संवेदनशीलता को बनाने का नाम ही साधना है। भीतर-बाहर एक परमात्मा है। भीतर भी वही है, बाहर भी वही है। परन्तु हमें उसकी अनुभूति क्यों नहीं होती है। इसलिये कि हम पत्थर समान हैं बुरा मत मानियेगा हम पत्थर समान हैं। ईश्वर की इतनी कृपा है कि 24 घंटे उसकी कृपा वृष्टि सब पर एक जैसी हो रही है। तो हम करें क्या? इसके लिये दो चार बातें मुख्य हैं वो निवेदन करता हूँ। संवेदनशील बनने के लिए इस आत्मप्रसादी को, गुरुप्रसादी को ग्रहण करने के लिए, हमें अपने हृदय को कोमल बनाना पड़ेगा।

Scanned by CamScanner

अपने पूरे शरीर को कोमल बनाना होगा। परमात्मा कहीं दूर नहीं है, भीतर में भी है, बाहर में भी है

अन्दर बाहर एको जानो ये गुरुज्ञान बताई।
कह नानक, बिन आपा चीने मिटे ना भ्रम की खाई॥

वो भीतर में भी है, बाहर में भी है। हमारे भीतर में भ्रम फैला हुआ है। परमात्मा पता नहीं हिमालय की चोटी पर है, पता नहीं जंगलों में है, ये सब भ्रम ही है, ये भ्रम को दूर करना है। और भ्रम कैसे दूर होगा।

हम सब अहंकार के प्रतीक हैं, मैं, मेरापन इस "मैं" को खत्म करना है। मुसलमान भाईयों में एक ईद आती है, जब वो बकरे का सिर काटते हैं, और प्रभु चरणों में अर्पण करते हैं। वास्तव में हमारे यहाँ नवरात्रों के दिनों में कलकत्ता में, और एक-दो स्थानों पर अब भी बलिदान दिया जाता है, वो सांकेतिक है।

वास्तविक बलिदान जो है, वो अपने अहंकार का है, "मै" और "मेरापन"। यह अहंकार अपने प्रीतम से, परमपिता परमात्मा से दूर करता है। हम यह समझ रहे हैं कि प्रभु लाखों-करोड़ों मील दूर है। कोई हज करने जाता है, कोई बद्रीनारायण जी जाता है, और कई स्थानों पर यात्रा करने जाते हैं, उसका भी लाभ है। परन्तु वास्तविक वस्तु वो तो आपके भीतर और बाहर इसी वक्त आपके अन्दर है। एक क्षण भर में उससे तद्रूपता हो सकती है। उस महन सागर में आप विलय हो सकते हैं। यदि हम अपने अहंकार की आहुति भगवान के चरणों में दे दें, बड़ा कठिन है। कहना बहुत सरल है परन्तु करना बहुत कठिन है। इस कठिनाई को दूर करन

Scanned by CamScanner

का जो उपाय हम करते हैं, उसी का नाम ही साधना है, अभ्यास है। बड़े-बड़े अच्छे संतों को, फक़ीरों को अहंकार नहीं छोड़ता, आप और हम तो कोई चीज ही नहीं है। अहंकार किसी को नहीं छोड़ता और अहंकार का साम्राज्य बहुत फैला हुआ है। इसी शरीर में नहीं है केवल। सारे संसार में फैला हुआ है। हम पहले ही कीचड़ में फंसे हैं और यह अहंकार हमें और आगे कीचड़ में धकेल देता है। इस माया-रूपी कीचड़ से निकलने के लिए भगवान कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया। इस उपदेश को महाभारत के युद्ध के वर्णन सहित व्यासजी ने महाभारत के रूप में प्रस्तुत किया है। गाँधी जी ने सिर्फ भगवान कृष्ण के अर्जुन को दिए गए उपदेश को, गीता के रूप में संकलित किया है। बाकी जो लड़ाई-झगड़े का हिस्सा है उसे गाँधी जी ने नहीं लिया है। उनको व्यास जी पर इतनी श्रद्धा नहीं थी केवल उसी पोर्शन (भाग) पर, उसी हिस्से पर जो गीता में संकलित किया गया है, उसकी बहुत स्तुति की है। गीता में अर्जुन को प्रेरणा दी गई है। पहला अध्याय भूमिका है, दूसरे अध्याय से शुरु होता है वास्तविक उपदेश। संसार रूपी कीचड़ से कैसे निकला जाये। शुरु के 40 श्लोक तो इतने महत्त्वपूर्ण नहीं हैं, परन्तु उसके बाद जो 35 या 36 श्लोक हैं अति महत्त्वपूर्ण हैं और उन श्लोकों का संक्षिप्त में सार जो है, वो यही है कि अहंकार को छोड़ें। अहंकार का कारण मैंने बताया है जैसे इच्छाओं और आशाओं की पूर्ति न हो तो, मन खराब हो जाता है। फिर क्रोध आता है, क्रोध से बुद्धि का नाश होता है, बुद्धि के नाश से सब कुछ नाश हो जाता है, ये सारा कुछ समझाया है। उसमें मुख्य बात यही बतायी है कि अहंकार मनुष्य को माया-रूपी कीचड़ से निकलने नहीं देता। इसी तरह आगे विस्तार करते गए हैं, अर्जुन

Scanned by CamScanner

को समझाते गए हैं कि संसार रूपी कीचड़ से किस प्रकार निकला जाए। यहाँ रहते हुए मनुष्य को कर्म के साथ और भी बातें करनी है। गृहस्थ में जाना हैं, वानप्रस्थ में जाना है, सन्यास में जाना है, तो सब तरह के जीवन को लेकर सब तरह के साधन भगवान ने अर्जुन को समझाये हैं। मुख्य रूप से अर्जुन को समझाया है कि मुझे वो भक्त प्रिय हैं जिनमें 12वें अध्याय, श्लोक 13वें से लेकर 20वें तक वर्णित गुण हैं, यदि वो गुण जिज्ञासुओं में हैं तो वो प्रेमी मुझे अति प्रिय है। अंत में अर्जुन सुनता गया, पता नहीं सारा कुछ सुन या समझ पाया या नहीं। परन्तु वो प्रश्न करता गया, और भगवान उत्तर भी देते गए। परन्तु अंत में वह मानसिक तौर पर थक गया। 18वें अध्याय के अन्तिम दो श्लोकों में उसने भगवान के चरण को पकड़ लिया और हाथ जोड़कर करबद्ध प्रार्थना की, "हे प्रभु! आप जैसे कहेंगे मैं वैसा कर लूंगा।" उसने तर्क करना छोड़ दिया। मनुष्य का स्वभाव है कि वो तर्क करता रहता है, यह मन शान्त नहीं होता है और कई लोग तो यह कहते हैं, ये गीता का जो उपदेश भगवान ने दिया, ये भगवान ने आत्मा–रूप में आकर, मन रूपी अर्जुन को, भीतर में ही उपदेश दिया। केवल एक ही शख्स ने सुना और किसी ने नहीं सुना। वो भी व्यास जी की कला ही है, जो जीवन की कला है, लिखने की कला है। जो पुस्तकें लिखते हैं, ऐसी पुस्तकें लिखते हैं, वो रोचक बनाने के लिए कुछ–न–कुछ बैकग्राउण्ड बना लेते हैं, भूमिका बना लेते हैं।

खैर, तो जिज्ञासु को उस 12वें अध्याय में, भगवान कहते हैं जिनमें निम्न गुण हैं, वो प्रेमी मुझे प्रिय है, बाकी सब छोड़ दें। 12वें अध्याय में 13वें श्लोक से लेकर 20वें श्लोक तक इतने गुण

Scanned by CamScanner

हैं कि एक–एक गुण को ले लें हम, तो कोई भी शख्स ये नहीं कह सकता कि उसमें ये गुण पूर्णतः है, तो परमात्मा मिलता है, भक्ति सफल होती है, बिन गुण भक्ति न होय। भक्ति न होने का अर्थ ये है कि भक्ति में सफलता नहीं मिलती जब तक उन गुणों को धारण नहीं करेंगे। भगवान कहते हैं जब तक ये गुण मेरे भक्त में नहीं होंगे वो जिज्ञासु मुझे प्रिय नहीं होगा। तो साधना को सफल करने के लिए सब भाई–बहन कहते हैं कि हमारा मन नहीं लगा। मन एकाग्र नहीं होता है, और भी अपनी बुराइयां लिखते हैं। मेरी करबद्ध प्रार्थना है आपकी सेवा में, कि कुछ समय दो–चार मिनट रोज साधना से पहले या साधना खत्म करने के बाद स्वनिरीक्षण करें कि क्या कारण है कि मेरा मन प्रभु के चरणों में नहीं लगता है। 2–4 दिन या 2–4 सप्ताह भले ही आप को सही उत्तर न मिले, परन्तु तत्पश्चात् आपको उत्तर मिलेगा। स्वनिरीक्षण भी एक विशेष प्रकार की साधना है। सच्चाई से अपने आपको देखिये। हम अपने आप से झूठ बोलते हैं। मैं धोखा देता हूँ तो छुपाता हूँ, अपने आपको। मैं किसी का शोषण करता हूँ, तो अपने अवगुण को छुपाता हूँ, भले बाहर से मैं अच्छा व्यक्ति लगूँ, परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है।

दादागुरु पूज्य लालाजी महाराज ने फ़रमाया है कि लोग–बाग तपस्या करते हैं जंगलों में जाते हैं, धूप में बैठते हैं, अग्नि भी जला लेते हैं, और साधना करते हैं, परन्तु हमारे यहाँ की जो साधना है कि हम अपने आपको जानें, स्वनिरीक्षण करें। 'जेता सागर भरया नीर, तेते अवगुण हमारे'। महापुरुष कहते हैं कि जैसे सागर विशाल है, कितना विशाल है हमारे अवगुण इससे भी ज्यादा हैं। तो इतने अवगुणों से मुक्ति प्राप्त करना सरल काम नहीं है। दादागुरु हमें प्रेरणा देते हैं कि हम स्वनिरीक्षण करें और किसी कापी पर

Scanned by CamScanner

नोट करें। एक-एक अवगुण को लें और उससे मुक्त होने के लिए प्रयास करें, सच्चाई के साथ। यदि मेरा झूठ बोलने का स्वभाव है तो मैं मानूं कि झूठ बोलता हूँ। जो व्यक्ति अपनी गलतियों को नहीं मानता वह साधना करने का अधिकारी नहीं है। अपने साथ तो सत्य बोलो। पूज्य गुरु महाराज ने फरमाया है कि एक-एक अवगुण को ले लीजिए, चाहे एक जीवन भी क्यों न लग जाए। जब तक उस अवगुण से मुक्ति न मिले तब तक साधना करते रहें। वास्तविक साधना ये है, क्योंकि जब तक गंगा स्नान की निर्मलता नहीं आएगी, ये चित जो है इस पर युग-युगान्तर के हमारे संस्कार अंकित हैं, तब तक हमें सफलता नहीं मिलेगी, तो कृपया पूज्य लालाजी महाराज की जो पुस्तक (अमृत रस, भाग-1) है, दूसरा पत्र या तीसरा पत्र है उसे गम्भीरता से पढ़ें। कम-से-कम प्रत्येक सप्ताह वो जो 2, 3 पैसेज हैं, सफे हैं, पढ़ने चाहिए। ये साधना आप को स्वयं करनी पड़ेगी। एक तो मुझे ये निवेदन करना है, दूसरा आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप यहाँ आए हैं तो समय का सदुपयोग करें। बिना आवश्यकता के बोलें नहीं, चुप रहने की कोशिश करें। आवश्यक कोई बात करनी है तो जरूर करें, अन्यथा भीतर और बाहर चुप रहें। बाहर तो चुप शायद हो जाए, परंतु भीतर को चुप करने के लिए जिस नाम का आप अभ्यास करते हैं वो करते रहिए और जो ध्यान करते हैं ये करते रहिये, चाहे आखें खुली हैं, चाहे घूम रहे हैं। यदि यह भी नहीं कर सकते हैं तो ईश्वर की कृपा वृष्टि को महसूस करने का प्रयास करें। अपने आपको शान्त कर लें, स्थिर कर लें, जो कृपा हो रही है, वृष्टि हो रही है, बारिश हो रही है, उसको ग्रहण करने की कोशिश करें, जज़्ब करें, हज़म करें। ये कोई अंधविश्वास नहीं है, यदि आपको न अनुभव हो तो आप मुझे मिल

Scanned by CamScanner

लें ये समय फिर नहीं मिलेगा। बातें कम करें, अति आवश्यक कोई बात हो तो अवश्य करिए। होता क्या है कि जब सत्संग खत्म होता है तो बाहर ऐसा मालूम होता है कि यहाँ कोई बड़ा मेला लगा हुआ है, सब बोलने लग जाते हैं। मेरी पुनः करबद्ध प्रार्थना है कि मौन की साधना कर सकें तो कृपया करें।

तीसरा, यहाँ के भाइयों, जिनके जिम्में यहाँ का आपके प्रति प्रबंध है, उनके साथ अपना पूरा सहयोग दें। जहाँ भी रहते हैं, वहाँ सफाई रखें – भीतर की भी, और बाहर की भी। यहाँ आकर आपके मन में किसी के प्रति बुरी भावना नहीं होनी चाहिए। हे प्रभु! सबका भला हो, सबका भला हो, सबका भला हो। और यहाँ की सेवा में जितना योगदान दे सकें कृपया वो करें।

Scanned by CamScanner

ईश्वर सर्वव्यापक है

''गुरुदेव मेरे, गुरुदेव मेरे, गुरुदेव मेरे, गुरुदेव मेरे,
सुबहान अल्लाह, सुबहान अल्लाह, सुबहान अल्लाह,
रहमत की घटा सुबहान-अल्लाह,
उस जुल्फ मुकद्दस को छूकर इतराती हुई, बलखाती हुई,
लाई है पयामें ताजा कोई, आई है हवा सुबहान अल्लाह॥''

आप सब भाग्वान हैं, सभी महापुरुष कहते हैं कि मनुष्य चोला बड़ी खुशकिस्मती से मिलता है, इस शरीर में रहते हुए यदि हमने अपने जीवन का लक्ष्य प्राप्त नहीं किया तो हमने समय व्यर्थ खोया है। सभी महापुरुषों ने चेतावनी दी है, परन्तु दुख की बात है कि मनुष्य, जागरूक नहीं होता है। अपने जीवन लक्ष्य के प्रति जागरूक नहीं होता है। प्रत्येक व्यक्ति को देखो वो दुखी है।

''नानक दुखिया सब संसार,
सो सुखिया, तिस नाम आधार।''

सभी दुखी हैं, परन्तु वो व्यक्ति आत्मिक सुख प्राप्त करता है, जिसने ईश्वर के नाम को अपना लक्ष्य बनाया है और उस नाम द्वारा परमपिता परमात्मा के साथ तद्रूपता स्थापित की है। उस तद्रूपता में कितना आनंद है।

''आनंद भया मेरी मांए, सत् गुरु मैं पाया।''

बुराइयों से मुक्त हों, केवल एक ही लक्ष्य रखें कि अपने आपको ब्रह्मज्ञानी बनायें। अर्थात् ईश्वर का ज्ञान आपको हो जाये। आपके

Scanned by CamScanner

रोम-रोम में ईश्वर, पहले ही है। अन्दर बाहर वो-ही-वो रह जायेगा। आपका व्यवहार है, आनंद, प्राण, शरीर, मन, बुद्धि के साथ वो खत्म हो जायेगा। ये स्थिति लाखों-करोड़ों में से एक व्यक्ति को प्राप्त होती है। परन्तु लक्ष्य ये प्रत्येक व्यक्ति का है, खासकर जो पढ़े-लिखे व्यक्ति है उन्हें सोचना चाहिए कि हमारे जीवन का क्या लक्ष्य है?

''तू-तू करता, तू भया, मुझमें रही न हूँ।
आपा फिरका मिट गया, जत देखां, तत तू।।''

ईश्वर सर्वव्यापक है, ये सब कहते हैं। परन्तु उसको पहचानते नहीं है। न भीतर में, न बाहर में। हमारा कर्म है, ''तू-तू करता, तू भया''। हे ईश्वर, तेरा सेवक, ''तू-तू करता तू भया। मुझमें रही न हूँ''। ''आपा फिरका मिट गया, जत देखां, तत तू।'' सिवाये परमात्मा के अन्य कुछ नहीं है। जो कुछ दिखता है वो अज्ञानवश दिखता है। तो आप सबका जीवन लक्ष्य है कि इसी शरीर के रहते प्रयास करें कि आप परमात्मा जैसे बन जायें। महापुरुषों ने प्रेरणा भी दी है, कि ऐ जीव! तू तो परमात्मा जैसा है ही। 'तत्वमसि', कहाँ तू अज्ञान में भूला हुआ है। इस अज्ञान रूपी अंधेरे से अपने-आप को मुक्त करें और सच्चे प्रकाश का, आत्मा का, परमात्मा का भान कर शान्त रहें। महापुरुष कहते हैं, ऐ जीव! तू तो वो ही है, जो परमात्मा है, वास्तव में तू परमात्मा है। भूला हुआ है कि तू ये शरीर, इस शरीर से अपना मोह हटा, पाँच प्रकार के ये शरीर हैं, और अपना शरीर, तन, मन, बुद्धि, अहंकार इन सबसे अपने मन को हटा और आत्मा को परमात्मा में विलय कर दें। अपने आप को खत्म कर दे। 'जब तक मैं था, हरी नांहीं'। जब तक आपके भीतर में, 'मैं' 'अहंकार' रहेगा तब तक आप ईश्वर से दूर रहेंगे। ''अब हरी, मैं नांहीं।'' अब साधना करते हुए ईश्वर की कृपा से

Scanned by CamScanner

सफलता मिली, केवल ईश्वर का ही भान है। मैं और मेरापन, तू और तेरापन, ये सब खत्म हुआ है। अगर हमने इस जीवन में इस लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया तो जीवन व्यर्थ जाएगा पता नहीं दूसरा जीवन कैसा मिलेगा। समय कम है, इसलिए मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ, केवल प्रार्थना करना ईश्वर से कि "हे प्रभु! अपने बच्चों को सच्चा ज्ञान प्रदान करें, वो अपने लक्ष्य को, कि 'मैं और परमात्मा एक हैं', प्राप्त करने का जो प्रयास है, साधन है, उसमें उनको सफलता मिल जाए और वो आपके चरणों में हमेशा-हमेशा रह जायें"।

हम परिश्रम करके, अपने अहंकार का त्याग करके, दीनता को अपनाकर ईश्वर में ऐसा विलय हो जाएं 'ज्यो जल में जल आये खटाना, त्यों ज्योती संग जोत समाना मिटा गया गमन पाये विसराम", हमेशा-हमेशा के लिए आप, अज्ञानता से मुक्त हो जाएं। हमेशा-हमेशा के लिए आप परमात्मा बन जायें।

हम किसी में मित्रता, मित्र देखते हैं, मित्रता का भाव रखते हैं। किसी के प्रति दुश्मनी का भाव रखते हैं। हमारा लक्ष्य है 'सब में रम रहा प्रभु एको'। हे परमात्मा एक ही पिता है सबका, वो सबमें रम रहा है। और हमारा लक्ष्य, हमारा कर्म है, हमारा अभ्यास है, कि हम इस अभ्यास को करें और सफल हो जाएं। और ईश्वर से तद्रूप हो जाएं। मैं और मेरापन खत्म हो जाए। "जब तक मैं था, हरी नांहीं, अब हरी है मैं नांहीं, प्रेम गली अति सांकरी, जामें दोऊ न समांहि।"

गम्भीरता से इस विषय को सुनते रहिए। केवल राम-राम कहने में अपना समय गवाएं नहीं। परन्तु राम नाम कहने के साथ-साथ वास्तविकता जो है उसको पहचानें कि आप कौन हैं। आपके मुखारविन्द से ये निकलेगा "अहं ब्रह्मास्मि"। केवल कहने मात्र के लिए नहीं

Scanned by CamScanner

है, रूप, स्वरूप ही, परमात्मा का स्वरूप ही है, उस रूप का आपको अनुभव होने लगेगा और ये बातें कोई ऊँचे-ऊँचे स्वर से नहीं कहनी होगी, वो अपने-आप हमारे व्यवहार में उतरेंगी। जैसा परमात्मा व्यवहार करता है, वैसा आप परमात्मा बनकर, आप परमात्मा जैसा व्यवहार करेंगे। किसी में कोई दोष नहीं देखेंगे, किसी को अपना शत्रु नहीं देखेंगे।

''सबमें रम रहा प्रभु एको, पेख-पेख नानक बिगसाई''

सबमें परमात्मा बस रहा है, चाहे मैं हूँ, चाहे कोई और है। उस परमात्मा के दर्शन करके, गुरु नानक साहब कहते हैं कि "हे मनुष्य! वो उस आनंद में तद्रूप हो जाते हैं, शब्द नहीं हैं वर्णन करने के लिए, मन चुप हो जाता है, मौन हो जाता है। भगवान शिव की समाधि दृढ़ हो जाती है। ठीक है कुछ समय उनको इस समाधि से परे हटना पड़ा, परन्तु वास्तव में शिव भगवान की जो समाधि है, वो सर्वश्रेष्ठ है। हम सब अज्ञानवश, माया के अंधेरे में फँसे हुए हैं। इसका एक ही रास्ता है कि एक ऐसा प्रेमी भक्त गुरु ढूंढिये जो परमात्मा जैसा हो। आप उसके चरण रज लेकर आप भी वैसे ही बन जायें।

''अन्दर बाहर एको जानो। ये गुरुज्ञान बताई,
कह नानक, बिन आपा चीने मिटे न भ्रम की खाई।''

जब तक आप अपने अज्ञान रूपी अहंकार का परित्याग नहीं करेंगे तब तक अपने सच्चे स्वरूप को तथा संसार को ईश्वर रूप नहीं देख सकेंगे। बड़ा कठिन है। परन्तु ईश्वर कृपा हो जाये। लाखों-करोड़ों में किसी एक व्यक्ति पर ही ये कृपा की वृष्टि होती है। मेरे में भी तू ही है। मेरे दुश्मन में भी तू है। प्रभु आप सब पर कृपा करें।

Scanned by CamScanner

अपने अहंकार को पत्थर मारें

वे जीव अति भाग्यवान होते हैं जिनको मनुष्य चोला प्राप्त होता है, इसी चोले में ही जीव अपने ध्येय की प्राप्ति कर सकता है, अर्थात् अपनी आत्मा को परमात्मा में विलय कर सकता है। परन्तु, इसके रास्ते में इतनी कठिनाइयां आती हैं कि मनुष्य उनका मुकाबला नहीं कर सकता है। आपने पिछले दो–तीन दिन हुए, अखबार में पढ़ा होगा कि मुसलमान भाई मक्का शरीफ़ गये हुए हैं, ईद का दिन मनाने के लिए। ईद की यात्रा तभी सफल मानी जाती है जब यात्री दो दिन पहले, वहां एक स्थान है शैतान का, माया का, प्रत्येक यात्री वहां जाके पत्थर मारता है, शैतान को, माया को। उसका परित्याग करता है। शैतान से, माया से मुक्ति देता है। तभी हज़ की यात्रा सफल होती है। जीवन में प्रत्येक जीव को ऐसा करना होता है। उसकी जीवन यात्रा कभी सफल नहीं होगी, जब तक वो शैतान से मुक्ति प्राप्त नहीं कर लेगा। अर्थात् माया से मुक्ति प्राप्त नहीं करेगा। गंभीरता से विचार करें, मनन करें, कि क्या हम इस शैतान से, अहंकार से, माया से, मुक्त हो गये हैं। हमें अधिकार है हज करने का? हमें अधिकार है, सत्संग के लाभ की प्राप्ति करने का? हम भी दशहरे में रावण का वध करते हैं। उसके सिर पर भी शैतान है, अहंकार है, उसके कई रूप दिखाए हैं, कई सिर दिखाए हैं। सबसे बड़ा जो है शैतान, वो है अहंकार, गधे का सर। ये वृत्ति और ये अहंकार हम सबके भीतर में है। हमारी साधना कभी भी सफल नहीं होगी, जब तक इस अहंकार को, इस माया को, अज्ञान को, हम हमेशा–हमेशा के लिए पत्थर नहीं मारते। पत्थर मारने का मतलब है साधना करके मुक्त नहीं होंगे। केवल पत्थर

Scanned by CamScanner

मारने से, या कलकत्ता में माँ के मन्दिर में जाकर आहुति देने से, वो निर्मलता प्राप्त नहीं होगी। आत्मा का साक्षात्कार नहीं होगा। परमात्मा से मिलन नहीं होगा। ये किसी सम्प्रदाय की प्रतिक्रिया हम नहीं करते, ये हम सबकी बाधाएं हैं, कोई इनसे ऊपर उठा हुआ नहीं है। परन्तु हमें भावना देखनी है। पत्थर मारने की भावना क्या है? शैतान को पत्थर मारने हैं, उसके बाद हम अधिकारी होते हैं, अन्तिम नमाज़ पढ़ने के लिए, ईश्वर की समीपता प्राप्त करने के लिए। तो मनन करें कि हमने शैतान को कितना मार लिया है, कितने पत्थर मारे हें? क्या हमारे भीतर में वो अभी जीवित है या मर गया है? साधना यही है। बिना शैतान को खत्म किए हुए, बिना माया, भीतर की माया को, अहंकार को खत्म किए हुए प्रभु की समीपता नहीं प्राप्त हो सकती है। प्रभु हमारे पास हैं, भीतर हैं, बाहर हैं। परन्तु शैतान के कारण, अहंकार के कारण हमें अनुभूति नहीं होती है।

भाई-बहन सभी कहते हैं, हमें आनंद नहीं मिलता है, हमें दर्शन नहीं होते हैं। पर उन्हें साफ-साफ बात कही जाये तो उनको बुरा लगता है कि इस प्रश्न का उत्तर आप अपने भीतर में देखें। टालना पड़ता है कि हां-हां ठीक हो जाएगा, ठीक हो जाएगा, चलते चलो। वास्तविकता यही है, भगवान कृष्ण ने भी गीता में अर्जुन को दूसरे अध्याय में यही समझाया है कि इस अहंकार को खत्म करो। अहंकार का श्री गणेश कहां से होता है। बहुत ही विशाल विषय है, संक्षिप्त में कहूंगा। इच्छा है, आशा है, परन्तु वास्तव में हमारे अतीत के संस्कार होते हैं, उनके कारण जो हमारा स्वभाव बनता है, उससे कोई व्यक्ति भी स्वतंत्र नहीं है। उनको खत्म करना है। बड़ा कठिन है, बड़ा कठिन है। तब भी भगवान ने कोशिश की

Scanned by CamScanner

है। इच्छाओं, आशाओं की पूर्ति नहीं होती है तो असंतुष्टि होगी। असंतोष होता है। असंतोष के कारण क्रोध होता है, क्रोध के कारण बुद्धि मलिन हो जाती है, बुद्धि मलिन हुई तो सब कुछ खत्म हो जाता है। ये तो रास्ते की रुकावटें हैं। परन्तु व्यक्ति करे क्या? व्यक्ति इनसे मुक्त कैसे हो? इस अहंकार से मुक्त कैसे हों? रावण का वध हुआ, वो भी ये पत्थर मारने का ही प्रतीक है। हिरण्यकश्यप का वध हुआ वो भी इसी अहंकार को खत्म करने का रास्ता है। पत्थर मारने का रास्ता है। हम सबको महापुरुष प्रेरणा देते हैं, परन्तु हम सब सोए हुए हैं, हम विवश हैं। मैंने जैसा निवेदन किया है हमारे अतीत के जो संस्कार हैं वो हमें आगे बढ़ने नहीं देते हैं। इसमें बड़ा समय लगता है, **बार-बार पत्थर मारने की जरूरत है। वो पत्थर कहाँ है? बार-बार महापुरुषों के सत्संग का लाभ उठाना है। इससे सरल रास्ता कोई नहीं है।** बाकी तो महापुरुषों ने बताया है, अष्टांग योग बताया है, ज्ञान योग बताया है, भक्ति बताई है, और भी भिन्न-भिन्न तरीके बताये हैं। जैन मत में साधना बताई जाती थी, तप बताया है। हमारी हिन्दु संस्कृति में भी पुरातन ग्रंथों में, ये बातें बतायी जाती थीं, बलिदान का भी तरीका बताया है, परन्तु बलिदान देने से भी कुछ नहीं होता। पहले व्यक्ति अपना बलिदान देता था या अपने बच्चों का बलिदान देता था। बाद में ये बलिदान का तरीका नारियल को काटना, बलिदान का प्रतीक मानकर ये समझ लेना कि हमने बलिदान दे दिया, हमारा अहंकार खत्म हो गया, ये समाज में त्रुटियां आती हैं, ये किसी का दोष नहीं है।

हमें अपने अहंकार को खत्म करना चाहिए, स्वनिरीक्षण करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को सच्चाई से, संजीदगी से अपने अहंकार

Scanned by CamScanner

को देखना चाहिए। कोई व्यक्ति नहीं, छोटा–बड़े से बड़ा, जो अहंकार मुक्त हो। सब महापुरुषों ने यही परामर्श दिया है। जिज्ञासु को अपने 'अहम' को खत्म करना चाहिए, दूसरे को क्या मारना है इस अहंकार को, अपने–आपको पत्थर मारो। परमात्मा आसानी से नहीं मिलता है। हज़रत इब्राहिम से भगवान ने, खुदा ने अपने बच्चे का बलिदान माँगा है। अस्सी–पिच्चासी साल में बड़ी सी आयु में शादी की है। छोटा सा बच्चा है, नन्हा मुन्ना, 5–6 साल का। वो बड़े बुजुर्ग थे अपनी साधना में बहुत प्रगति उन्होंने की थी, परन्तु इस बच्चे के मोह में उन्होंने जो प्रगति की थी, साधना की थी, वो करीब–करीब खत्म होती जा रही थी। भगवान ने करुणा की। भिखारी के रूप में आए। भिक्षा मांगी। उन्होंने कहा, "क्या चाहते हो ?" "तुम दोगे ?" "हां देंगे।" "मुझे इस बच्चे का बलिदान चाहिए।" हमारी संस्कृति में आता है कि राजा मोरध्वज से भी बच्चे की आहुति मांगी है, भगवान ने। अहंकार का प्रतीक मन है जो फँस जाता है। कोई किसी बात में फँसा है, कोई किसी बात में फँसा है और मन सोचता है कि मैं तो आनंद ले रहा हूँ मैं बड़ा सुखी हूँ। मैं बड़ा अच्छा हूँ। परन्तु इस अच्छाई में, इस सुख में, इस मोह में, जो इन कामनाओं में इच्छाओं की पूर्ति में है, वो अहंकार ग्रस्त हो जाता है। उस महान राक्षस के मुँह में गिर जाता है।

ईश्वर हमारा सबसे प्यारा मित्र है

भीतर में प्रेरणा दी, हज़रत को कि तू आप निर्णय नहीं ले सकता तो इस छोटे बच्चे से पूछ। देखिए परमात्मा तो कृपा करता है, प्रत्येक कदम पर कृपा करता है, परन्तु हमारा मन धोखा देता है। बड़े–बड़े ऋषियों–मुनियों को धोखा दिया है। इसलिए पूज्य गुरु महाराज जी इस मन के लिये उर्दू का शब्द प्रयोग किया करते थे,

Scanned by CamScanner

'भूज़ी'। बड़ा खतरनाक है ये, इससे सावधान रहना चाहिए। हज़रत ने बच्चे से पूछा कि ये फकीर तुम्हारी आहुति चाहता है। तो बच्चा तो पहले ही परमात्मा का प्रतीक था। वो कहता है, पिता, इससे अच्छी चीज क्या है? मेरी आहुति से इस व्यक्ति की संतुष्टि हो जाएगी, संसार में और क्या है? किसी को संतुष्ट करना, परमात्मा को संतुष्ट करना है। ब्राह्मण को खिलाना, ईश्वर को खिलाना है। श्राद्ध करते हैं, ईश्वर को पहुँचाते हैं। ये प्रतीक माना गया है। सब संस्कृतियों में माना गया है। हज़रत की आन्तरिक चक्षुयें खुलीं कि एक बच्चा इतनी ऊँची-बड़ी बात कह रहा है और मैंने सारा जीवन इस तरफ लगाया और मैं अब तक इस परीक्षा में असफल रहा। उसने ईश्वर से करबद्ध प्रार्थना की, "हाँ, आप इस बच्चे का बलिदान ले सकते हैं।" परमात्मा ने बलिदान क्या लेना था। दर्शन दिए हैं, आर्शीवाद दिया है। इस शैतान को छोड़ो, इस शैतान को पत्थर मारो। अब तुम्हारा वक़्त मेरे पास आने का है।

हमारी संस्कृति में, मनन पर बहुत बल दिया गया है, मनन करना चाहिए। अपने मन की कमजोरियों को लेकर एक-एक को लेकर, मनन करना चाहिए। सब महापुरुषों ने लिखा है, मनन का बहुत गुणगान किया है। गुरु नानक ने भी इस पर बहुत कुछ लिखा है, हमारी सुबह की प्रार्थना में चार पद ऐसे हैं, जो मनन पर ही हैं। बड़ी स्तुति की है, मनन की। "मनन की गत कही न जाए।" ये मनन जो करना है इससे जो शुद्ध परिणाम मिलते हैं, सफलता मिलती है, इसका वर्णन नहीं किया जा सकता। हम सब लोग सुबह में पढ़ जाते हैं, इसके चार पद हैं, ऐसे ही जल्दी-जल्दी में पढ़ जाते हैं, मनन करने का अर्थ क्या है? कोई नहीं समझता, न कोशिश करता है।

Scanned by CamScanner

श्रवण यह पहला चरण है साधना का। महापुरुषों की सेवा में जाना, उनके प्रवचन सुनने हैं। इसी को गुरु नानक ने अपनी पवित्र वाणी में दोहराया है। मनन के चार पद हैं, श्रवण के चार पद हैं। एकांत में जाकर जो सुना उस पर मनन करना और इस पवित्र वाणी में जो आदेश दिए उन बातों को अपने जीवन में अपनाकर, अपने जीवन को सुफल करना, उनका अनुसरण करने की कोशिश करना, निध्यासन करना। बिना सद्‌गुण अपनाए हुए और बिना अवगुणों का त्याग किए हुए, मनुष्य साधना में सफल नहीं हो सकता है। श्रवण, मनन, निध्यासन, इसी से विवेक–वैराग आ जाता है। जब व्यक्ति प्रतिकूल बातों का परित्याग करता है और अनुकूल बातों को ग्रहण करता है, वो अधिकारी हो जाता है। असत्य को छोड़ता है, सत्य को अपनाता है। हिंसा को छोड़ता है, अहिंसा को अपनाता है, उसको परलोक में प्रवेश मिल जाता है। मुश्किल दरवाजे खुल जाते हैं, उसका उद्धार हो जाता है। अमृत बेला, प्रत्येक व्यक्ति को सुबह सूर्य उगने से पहले उठना चाहिए। उसे अमृतबेला कहते हैं, आत्मिक बेला कहते हैं। सतनाम, जो सच्चा नाम है ईश्वर का, सभी नाम उस ईश्वर के हैं, आत्मा की अपनाओ, आत्मा को ईश्वर के साथ तदरूपता स्थापित करो।

'अमृतबेला सच नांऊ', फिर मन इधर–उधर जाता है तो ईश्वर का ध्यान करो 'बड़ि आयी'। स्तुति करो। फिर कहा है, मन को स्थिर करने के लिए विचार करो। 'विचार'। हम कुछ योग करते हैं, मैं अपने ही प्रति कह रहा हूँ। मनन की बात करनी है विचार की बात करनी है। तो इस महान उत्सव ईद से हमें प्रेरणा लेनी चाहिए। शैतान को पत्थर मारने की रस्म से हमें प्रेरणा लेनी चाहिए, भीतर में बैठे हुए शैतान को निकालना चाहिए। मुख्य

Scanned by CamScanner

साधन इसका मनन है। मेडीटेशन (Meditation) अंग्रेजी में शब्द आता है, उसके दो अर्थ हैं। एक तो ईश्वर की समीपता की अनुभूति का साधन है और एक मेडीटेशन है, विचार है, जिसको हम अपनी भाषा में विचार कहते हैं, आत्मविचार, मनन है। तो दोनो करने चाहिए। इसमें किसी सम्प्रदाय से कोई बैर-विरोध नहीं है, ये बातें सब में हैं। नाम भले ही किसी ने कुछ रख लिया है बातें सबमें एक जैसी है। सच्चाई अलहदा थोड़ी हो सकती है, उसका नाम चाहे इस्लाम रख लो या हिन्दू रख लो, सच्चाई-सच्चाई होती है, ईश्वर-ईश्वर रहेगा। उसे मुसलमान लोग इस्लाम कह लेते हैं, हम लोग ईश्वर कह लेते हैं। क्या अन्तर है ? मुसलमानों का खुदा अलहदा है, हिन्दुओं का ईश्वर अलहदा है, ईसाइयों का गॉड (God) अलहदा है, ये सब छोटे दिल की बातें हैं। ईश्वर सबमें एक जैसा है। "सब में रम रिहा प्रभु एको। पेख-पेख नानक बिगसाई।" मित्रों को देखकर, दर्शन करके तो प्रसन्नता होती है, शत्रु में प्रभु के, परमात्मा के दर्शन करें, तो वहाँ हमारा चित प्रसन्न हो, तो समझना चाहिए कि हमारी साधना सफल हुई है। हज़रत ईसा यही कहते हैं - 'क्षमा कर दो सबको, क्षमा करके उनकी सेवा करो, सेवा ही नहीं उनसे प्रेम करो, अपना समझकर, शत्रु को अपना समझकर उससे सेवा प्रेम करो।' एक-आधा दफा मैं पहले भी निवेदन कर चुका हूँ। गुरु गोविन्द जी, औरंगजेब की फौज के साथ लड़ रहे हैं। एक सेवक आता है कहता है कि एक व्यक्ति शत्रुओं की सेना में जाकर उनकी मरहम-पट्टी करता है हम उनको मारते हैं, वो उनको पुनः जीवित कर देता है और फिर हमसे लड़ते हैं। गुरु महाराज की सेवा में आते हैं, वो लोग ये आरोप लगाते हैं, कहा कि अच्छा उसे बुलाओ। बुलाया गया। आप करबद्ध होकर खड़े हो गए, आदर के साथ। "क्या मुझसे कोई गलती हो गई है ?" उन सेवकों को कहा, बोलो

Scanned by CamScanner

भई, तुम क्या कहते हो ? उन्होंने अपना आरोप दोहराया। गुरु महाराज ने कहा कि तुम क्या कहते हो ? उनकी आँखों में, चक्षुओं में प्रेम–अश्रु बह रहे हैं। निवेदन कर रहे है कि "हे गुरुदेव! मुझे तो हर जगह आप ही आप दिख रहे हैं। मुझे न कोई हिन्दू दिखता है, न कोई मुसलमान दिखता है, मैं तो आपकी सेवा करता हूँ। आपकी मरहम–पट्टी कर रहा हूँ।" वो महान ज्ञानी था, पण्डित था। पण्डित का मतलब ये जाति का पण्डित नहीं है, महाज्ञानी था। वेदों को, शास्त्रों को पढ़ा हुआ था। केवल पढ़ा–लिखा हुआ नहीं था, व्यवहार में भी वो उस पढ़ाई को लाता था। जब उसने कहा, मैं तो आपकी सेवा करता हूँ, मुझे आपके अलावा कोई दिखता नहीं, मुझे तो कोई दिखता नहीं, आप मेरे चक्षु बदल दीजिए। जब भक्त के चक्षुओं में से गंगाजल बहता है, तो गुरु के चक्षुओं में से कैसे रुक सकता है। वहाँ खून की नदी बह रही थी, यहाँ प्रेम की नदी बह रही थी। जिन्होंने शिकायत की थी, वो चुप कर गए, उनको भी प्रेरणा मिली कि लड़ाई–, लड़ाई के लिए नहीं है, ये धर्मयुद्ध है। गुरुदेव बड़े प्रसन्न हुए, और उनको पंडित की पदवी प्रदान की। पंडित थे ही वो, बहुत ज्ञानी थे। वेद, शास्त्र आदि बहुत पढ़े हुए थे, और उनको कहा कि और आपका काम तो पूरा हो गया। और आप हमसे पृथक होकर, संसार की सेवा करो। उनको गद्दी दी, उनको गुरु गद्दी दी। उनकी गद्दी अभी भी चल रही है जगाधरी में। उस गद्दी पर जो भी व्यक्ति विराजमान होता है, वो पंडित कहलाता है। और वो सब लोग ज्ञानी हैं, महापुरुष उच्चकोटि के विद्वान होते हैं। तो जीवन तो ऐसा होना चाहिए। पत्थर मारने का मतलब है, भीतर से अहंकार को निकालें। केवल कहने से नहीं निकलेगा। व्यक्ति लगा रहे, सत्संग में पड़ा रहे। महापुरुषों की सेवा करता रहे। अपने जीवन को देखता रहे, अपने जीवन में झांकता रहे, स्वनिरीक्षण करता रहे।

Scanned by CamScanner

पूज्य लालाजी महाराज का पत्र है, तीसरा कि दूसरा, उनकी पुस्तक में। गुरु महाराज जी बार-बार ये पढ़ा करते थे कि एक-एक अवगुण को लीजिए, चाहे एक महीना लग जाए, चाहे छः महीने लग जाएं। मनन करते रहिए, जब तक वो अवगुण छूटे नहीं। दूसरी बात के लिए कोशिश मत करिए, पूज्य लालाजी महाराज का कहना था कि औरों के यहाँ तप होता है, जैसा कि आमतौर पर तप करते हैं, धूप में जाते हैं, अग्नि जलाते हैं आदि, हमारा तप ये है कि स्वनिरीक्षण करें, अपने दोषों को देखें, आदि। भीतर में जो अहंकार बैठा हुआ है उसके साम्राज्य को देखें। एक-एक बात को, एक-एक कमी को, जब अपने सम्मुख रखें, मनन करें और उससे निज़ात, उससे मुक्ति की कोशिश करें। चाहे छः महीने लग जाएं, साल लग जाए, अधिक समय लग जाए, चिन्ता न करें, पर उस कमी को दूर करना ही हमारी साधना है। हमारे यहाँ की साधना यही है। पूज्य लालाजी महाराज के ये शब्द हैं, बड़े स्पष्ट तरीके से ये बात बताई गई है। लोग-बाग साधन करते होगें। दो-दो घंटे बैठ जाते हैं, चार-चार घंटे बैठ जाते हैं। बैठे रहिए, सारा दिन किताब, पुस्तक पढ़ते रहिए। पाठ करते रहिए, करते रहिए। कोई बुरी बात नहीं है परन्तु जब तक अहंकार नहीं निकलता है, मुझे सभी लोग क्षमा करेंगे, हमारी साधना में सफलता नहीं आएगी, नहीं आएगी, नहीं आएगी। इस अहंकार का बड़ा ही विचित्र रूप है। इसको समझना बड़ा कठिन है। इसलिए सभी महापुरुषों ने जिज्ञासुओं को परामर्श दिया है कि किसी सच्चे व्यक्ति का आश्रय लेकर इस रास्ते पर चलो। अपने मन का आश्रय मत लो। हमारे देश की स्त्री, पति का सहारा लेती हैं, वे महान हैं, परन्तु हम पति लोग, पुरुष लोग किसी का सहारा नहीं लेते हैं इसीलिए हम पीछे रह जाते हैं। हमारी बहनें आगे बढ़ जाती है। गुरु महाराज जी कहा करते थे कि क्या

Scanned by CamScanner

करने की जरूरत है? पति आपका सत्संग में आता है, साधना करता है, जो कुछ भी वो करेगा, बगैर मेहनत करे आपको आधा फल मिल ही जाएगा। और जो आप मेहनत करती हैं वो और ज्यादा होगा। आप पति से कहीं ज्यादा लाभ उठायेंगी। ये कोई मखौल नहीं किया करते थे, ये सत्यता है। हमें अपनी संस्कृति पर अपनी माताओं, बहनों पर गर्व है। मगर बदकिस्मती से नई शिक्षा से, नई संस्कृति से और राजनीति से, इस महान शक्ति को नाश कर रहे हैं, खत्म कर रहे हैं। बहनें भी नहीं समझतीं इस बात को, और पुरुष भी नहीं समझते। संस्कृति जलाई जा रही है।

ईश्वर कृपा करें।

Scanned by CamScanner

दुविधा में न रहें

"अगर ईश्वर से प्यार है और दुनिया से भी प्यार है तो तरक्की नहीं होती, वहीं का वहीं रहता है।"

हम सब महापुरुषों के चरणों में यही निवेदन करते आ रहे हैं और सम्भवतः आगे-आगे भी करते रहेंगे कि हमारा मन नहीं टिकता है। भीतर में शान्ति दो। सत्संग में आए थे ये भाव लेकर, कि हमें भीतर में हमेशा-हमेशा के लिए शान्ति मिल जाएगी, किसी प्रकार की उत्तेजना से हम प्रभावित नहीं होगें, हमें सुख, शान्ति और आनंद मिलेगा। परन्तु कुछ भाइयों को छोड़कर, उनकी गिनती दो-चार ही हो सकती है अन्यथा हम सब की स्थिति ये ही है कि भीतर में हम थोथे हैं, शून्य हैं। जैसे इस शरीर पर सुन्दर कपड़े पहने हुए होते हैं, हम भी समझते हैं हम बड़े सुन्दर हैं, संसार भी समझता है कि ये व्यक्ति सुन्दर है। परन्तु वस्त्रों के पीछे उसका शरीर है। शरीर के भीतर देखा जाए कि मनुष्य क्या है, हाड़-मांस का पुतला है, गन्दगी है, और भीतर में घुसा जाए तो पता चलेगा कितने संस्कार हैं जो ये वृत्तियां आज से 50 साल पहले थीं, वैसे की वैसी या उससे बुरी स्थिति है, तो दुख होता है, ना तो हम सत्संग को छोड़ सकते हैं और न ही संसार रूपी कीचड़ में फँसना चाहते हैं। बहुधा हम सब लोग रजो गुण में फँसे हुए हैं, तमो गुण में बहुत कम व्यक्ति हैं, सात्विक गुण में पूर्ण रूप से वैसे हो गये हों, वो एक-आध व्यक्ति ही होगा, अन्यथा सब लोग रजो गुण में फँसे हुए हैं। हमें क्रोध भी आता है, हमारे भीतर में आशाएं भी हैं, इच्छाएं भी हैं, हमारा कंट्रोल अभी तक जिव्हा पर नहीं है, ये खूब बोलती है, भीतर में भी बाहर में

Scanned by CamScanner

भी। खूब खाती है, खूब रस लेती है। 24 घंटे रसों में फँसी रहती है। इसी प्रकार हमारी अन्य इन्द्रियां हैं, जैसे चक्षु हैं, कान हैं, सब संसार में फँसे हुए हैं। और सबसे अधिक फँसाने वाला यंत्र जो परमात्मा ने हमें दिया है वो हमारा मन है। 24 घंटे ये बुरा भला सोचता रहता है, प्रतिक्रिया करता रहता है, अपने-आप को दुखित करता रहता है। कोई बाहर से वस्तु दुखित नहीं करती है, व्यक्ति तो स्वयं ही अपने विचारों से दुख-सुख भोगता रहता है। ये भूमिका है प्रत्येक व्यक्ति की। जब तक इसको समझेंगे नहीं, तब तक साधना में विशेष फल मिले, उसकी सम्भावना बहुत कम है। तो प्रत्येक जिज्ञासु को मनन करना चाहिए कि आखिर क्या सत्संग में कमी है, सत्संग कराने वाले में कमी है या ईश्वर हमसे रूष्ट है, या हमारे में कमी है। पूज्य गुरु महाराज हमारी स्थिति को देखकर दुखित हुआ करते थे, और कहा करते थे कि यदि आपको गुरु में श्रद्धा नहीं है, जैसे हमारे चरित्र निर्माण से प्रतीत हो रहा है, पता लग रहा है तो जिज्ञासु को गुरु आज्ञा दे देता है कि बेशक वो किसी दूसरे महापुरुष के पास चला जाए। क्योंकि वो नहीं चाहता कि किसी व्यक्ति का भविष्य मलीन हो। वो यही चाहता है कि उसका अपना भला हो न हो, अन्य सब भाई-बहनों का उद्धार हो जाए। सबको शान्ति, सुख, आनंद मिले। ये विषय गम्भीर समस्या है। इसे खूब समझना चाहिए, सोचना चाहिए, मनन करना चाहिए। हँसी-मजाक सारा दिन करते रहते हैं, उसी में समय बर्वाद हो जाता है।

आखिर हमारे जीवन का लक्ष्य क्या है। सभी महापुरुष कहते हैं 'तत्वमसि', 'तुम तो वही हो, परमात्मा हो।' "मन तू जोत स्वरूप है, अपना मोल पहचान।" तुम तो वो ज्योति ही हो

Scanned by CamScanner

परमात्मा की ज्योति, परमात्मा ही हो। साधना कर और अपने आप को पहचान। तू ये शरीर नहीं, प्राण नहीं, मन नहीं, बुद्धि नहीं, आनंद नहीं, तुम तो आत्मा हो, परमात्मा हो। तुम तो फ़क्र से कह सकते हो 'अहम ब्रहमस्मि', मैं ब्रह्म हूँ', कब कहोगे। जब ब्रह्म बन जाओगे, उससे पहले कहना उचित नहीं होगा। वास्तव मे प्रत्येक व्यक्ति ब्रह्म है। इसमें कोई संदेह नहीं है परन्तु अपने रहने-सहने के कारण हमने ब्रह्मत्व को छिपा रखा है, ब्रह्मत्व यानि आत्मा। इसके ऊपर पाँच आवरण हैं, हमारे शरीर का, प्राणों का, मन का, बुद्धि का, आनंद का। एक और आवरण पूज्य गुरु महाराज जी कहा करते थे सुदर्शन पुस्तक पढ़कर आकाश का। ये बात गलत नहीं है, बहुत से लोग साधना करते हैं, पाँचों आवरणों से मुक्त हो जाते हैं। छठे आवरण, आकाश को ही आत्मा समझ लेते हैं। यहाँ गुरु की जरूरत होती है। आकाश और आत्मा में तुलना करना बड़ा कठिन है। बड़े-बड़े संत यहाँ आकर गिर जाते हैं। पहले तो इसके एक ओर पर्दा आता है, आनंद का, हम समझ लेते हैं कि ये आनंद ही आत्मा का रूप है, परमात्मा का रूप है। इसलिए गुरु की आवश्यकता होती है। गुरु वो जो इन छः आवरणों की जाँच की जानकारी रखता है, तभी तो वो दूसरों को बता सकेगा कि उसका कौन सा आवरण दूर हुआ है। तो हम सबका कर्त्तव्य है, धर्म है, कि हम अपने समय को बर्बाद न करें। सत्संग में आए हैं तो स्वनिरीक्षण करना चाहिए कि हमारी प्रगति कहाँ तक हुई है और हम क्यों आगे नहीं बढ़ रहे हैं। मैं पूज्य गुरुदेव के शब्दों में आपको दोबारा कहता हूँ, आप सबको स्वतंत्रता है कि वो बेशक सत्संग छोड़ सकते हैं, परन्तु अपना भविष्य न खराब करें। जीवन का कुछ पता नहीं है किस वक्त काल भगवान आ जाते हैं, किसी को पता नहीं है। समय की

Scanned by CamScanner

कीमत को पहचानना चाहिए। इसीलिए इस रास्ते पर तन्मयता लानी चाहिए, बाकी सब वस्तुओं को, सांसारिक वस्तुओं को, परमार्थ वस्तुओं को, एक तरफ रख दो। अपने आपको पहचानना है। आत्मा के दर्शन करने हैं। परमात्मा के दर्शन करने हैं। ये भिन्न-भिन्न तरीकों से कहते हैं, बात एक ही है। हमारे भीतर में पाँच आवरण हैं। हमें उनसे मुक्त होना है। खेद की बात है कि हम सब समझते हुए भी, हम पहले आवरण से अभी मुक्त नहीं हुए हैं। ये शरीर का जो आवरण है इससे व्यक्ति इतना आसक्त है कि इसमें फँसा हुआ है, बाकी चार आवरण तो अति सूक्ष्म हैं। उन्हें बड़ा समय लगेगा, उनसे मुक्त होना बड़ा कठिन है, आसान नहीं है। ईश्वर की प्राप्ति, आत्मा की अनुभूति तभी होगी जब इन पाँचों आवरणों से आप मुक्ति प्राप्त कर लेंगे। इनसे मुक्ति प्राप्त करने को ही नाम कहते हैं, साधन कहते हैं, सिद्धि को भी नाम कहते हैं, परमात्मा को भी नाम कहते हैं। और नाम की प्राप्ति का जो साधन है उसको भी नाम ही कहते हैं। ये साधन भी धीरे-धीरे सूक्ष्मतः होता चला जाता है। **अन्तिम साधन जो रह जाता है वो है आत्मा से, आत्मा को, आत्मा में देखना है। ये भगवान शिव ने पार्वती जी को समझाया है।** उन्होंने 130 या 135 प्रकार के साधन पार्वती जी को बताये हैं। उसमें से एक साधन ये भी है। आत्मा से आत्मा को, आत्मा में देखना है। सभी महापुरुष प्रेरणा देते हैं और देते आए हैं और आगे ये प्रेरणा हमको मिलती रहेगी। परन्तु मनुष्य माया में इतना फँसा हुआ है। माया का भी विशाल साम्राज्य है। माया को भी समझना अति कठिन है। हम सब माया रूपी कीचड़ में फँसे हुए हैं। रहना तो इसी संसार में है और सब संत भी ये कहते हैं, कि कमल पुष्प की तरह संसार में रहना है, ये संसार तो कीचड़ रूप

Scanned by CamScanner

है। साधना की सिद्धि यही है कि हमारा जीवन ऐसा बन जाए कि संसार रूपी कीचड़ की एक छींट भी हमारे जिस्म पर न पड़े। हम कमल पुष्प की तरह प्रसन्न मुद्रा में खिले रहें। ये आत्मा का रूप है। आत्मा और अनात्मा एक ही जगह पर रहते हैं। कीचड़ और कमल का पुष्प एक जगह रहते हैं, परन्तु कमल की स्थिति कुछ और है, कीचड़ की स्थिति कुछ और है। इस समय हम सब कीचड़ रूप हैं। इस कीचड़ से निकलना है और कमल पुष्प बनना है। महापुरुष तो सभी यही कहते हैं कि "मन तू जोत-स्वरूप है, अपना मूल पहचान।" ऐ जीव तू तो ज्योति स्वरूप है, आत्मा स्वरूप है, परमात्मा स्वरूप है, संसार, कीचड़ रूपी संसार से अपना मन हटा तथा अपनी वास्तविकता को पहचान, तू तो सत-चित-आनंद स्वरूप है, तू परमात्मा ही है। तू तो वही है जो परमात्मा ही है 'तत्वमसि'। पर कहने से कुछ नहीं होगा। पूज्य गुरुदेव फ़रमाया करते थे कि एक जन्म तो क्या दस जन्म भी लग जाए तो कम हैं। दस जन्म में एक सच्चा गुरु मिलता है। शरणागत रहते हुए, उनकी सेवा करते हुए, साधन करते हुए, सिद्धि को प्राप्त कर सकता है। ये रास्ता बड़ा कठिन है, परन्तु संतों ने इसको सरल बनाने का प्रयास किया है। इतना सरल नहीं है, जितना कहा जाता है। बड़ा कठिन है, बड़ा कठिन है। जितना समय व्यतीत होता जाता है, उतना ही देख रहे हैं कि हम कीचड़ में और अधिक फँसते जा रहे हैं और परमात्मा से दूर होते जा रहे हैं। रोज़ जाने-अनजाने, हम मांया में इतने फँसते जा रहे हैं, फँसते जा रहे हैं, क्या कहूं दुख होता है कहते हुए। अपनी स्थिति कह रहा हूँ, आपकी नहीं कह रहा हूँ। रोना आता है अपनी स्थिति पे। पूज्य गुरुदेव जी कहा करते थे, सच्चे जिज्ञासु को गंभीर होना चाहिए। ठीक है संसार में रहते हुए सांसारिक वस्तुओं

Scanned by CamScanner

का भोग भी करना है, परन्तु होश के साथ जितना आवश्यक है। हम अनावश्यक भोग में फँस जाते हैं। जबान को मिर्ची लग रही है भीतर में आवाज आ रही है, अब तो छोड़ दो। परन्तु जबान के रस में ये जीव इतना फँसा हुआ है कि और खाता है, खाता है, और खाता है। और दूसरी भोर तक, प्रभाव हो जाता है तब होश आते हैं, तब 15–20 दिन पेट खराब रहता है, परहेज करता है। इतना करके पुनः फँस जाता है। हम सब रोज फँसते हैं। ये जीव ही है ऐसा। वैसे ही और organ भी हैं। हजरत मोहम्मद साहब ने रोज़े प्रदान किए, व्रत प्रदान किए। हमारे यहाँ भी व्रत रखे जाते है।। ये कोई नई बात नहीं थी। परन्तु उनका अनुभव था, जिस समय में उन्होंने अवतार लिया और जिस वातावरण में अवतार लिया, वहाँ के लोग उस समय मूढ़ मति के थे, विद्या नहीं थी, समझदारी नहीं थी, उनको परमात्मा की तरफ ले जाना एक बड़ा भारी काम था। हज़रत मोहम्मद के पास ये साधारण काम नहीं था उन्होंने जितनी सेवा की है वो बेमिसाल है। उन्होंने रोज़े अर्थात् व्रत के लिए प्रेरणा दी है तथा कहा है कि व्रत के परिणामस्वरूप आप अपनी जिव्हा के रस पर अंकुश लगा लेते हैं, तो आपकी जितनी अन्य इन्द्रियाँ हैं, स्वयं ही आपके वश में हो जाएंगी।

प्रत्येक व्यक्ति इस जिव्हा रूपी इन्द्री में इतना फँसा हुआ है कि इसी कारण वो अन्य इन्द्रियों पर भी कंट्रोल नहीं कर पाता है। बहुत मुसलमानों से मेरी बातचीत होती है। किसी को रोज़े रखने का महत्त्व पता ही नहीं है। एक–आध आदमी जानता है, परन्तु सामान्यतः वो नहीं जानते हैं। हमारी बहनें भी नहीं जानती हैं, हमारे भाई लोग भी नहीं जानते हैं। तो बस ये है, हम इस

Scanned by CamScanner

जाति के हैं और हमें व्रत रखना चाहिए, वो रख रहे हैं। तो मैं किसी की प्रतिक्रिया नहीं करता हूँ, परन्तु हजरत मोहम्मद साहब का जो महत्त्व था, कि जो व्यक्ति इस ज़बान को वश में कर लेता है, जो व्यक्ति इस रस-स्वादन को वश में कर लेता है, वो शरीर की सब अन्य इन्द्रियों को कन्ट्रोल में कर सकता है और ईश्वर की प्राप्ति सरलता से उसको हो सकती है। हम सब सीधे, विचार करें, मनन करें कि हम अपनी जिव्हा पर कितना कन्ट्रोल रखते हैं। सब पढ़े-लिखे हैं हम लोग। हमारी जिव्हा पर कितना कन्ट्रोल है। हम में कई लोग डाक्टर भी हैं, कई लोग क़ाफी पढ़े-लिखे हैं। ह्यूमन साइकोलोजी (Human Psychology) मनुष्य की बुद्धि का जो विज्ञान है, उसकी समझ रखते हैं, परन्तु व्यवहारिकता? हम व्यवहारिक नहीं है। मुसलमानों का दोष नहीं, हिन्दुओं का दोष नहीं, मनुष्य का दोष है, 'एज ए व्होल' (as a whole)। पूज्य गुरु महाराज रोज़ कहा करते थे कि इस जिव्हा को वश में करो। सेवक के घर में पधारे वो एक दफा। जैसे पहले खाना बनता था। शुरू से चटपटा खाना बनता था और कभी-कभी कोई विशेष अतिथि घर में आएं तो हम खाना और चटपटा बनाने के कोशिश करते हैं। तो पूज्य गुरुदेव ने मेरी कमजोरी देखी कि मैं प्याज बहुत खाता हूँ। स्वयं भी खाता हूँ और औरों को भी खिलाता हूँ। उनकी महान कृपा थी मुझ पर। कभी उन्होंने कोई विशेष आदेश नहीं दिया, जीवन में। ये बात करो, वो बात करो, मेरे में ये दोष है, कभी उन्होंने नहीं कहा। उस दिन भी प्रसन्न मुद्रा में कहने लगे, नाम कभी-कभी पुकारा करते थे, मुझे सरदार जी कहते थे। बड़े स्नेह से कहा कि आज आप से एक बात करनी है। मैंने कहा फरमाइये। 'आप हमारी बात मानेंगे? मैंने कहा 'अवश्य मानेंगे।' कहा 'प्याज खाना छोड़ दीजिए'। उन्होंने मुझे शक्ति दी, उन्होंने

Scanned by CamScanner

मुझे बल दिया। तभी मैंने उसी क्षण से ही प्याज खाना छोड़ दिया। प्याज देखा जाए तो उसके बहुत गुण हैं। परन्तु ज्यादती, गुणों को भी अवगुण बना देती है। प्याज और लहसुन इनमें विशेष गुण हैं। परन्तु इनको अधिक मात्रा में खाया जाए तो ये विपरीत परिणाम उत्पन्न करते हैं। तो उन्होंने कहा प्याज छोड़ दीजिए, मैंने छोड़ दिया। उन्होंने प्याज के लिए कहा मैंने लहसुन भी साथ छोड़ दिया। **तो इसी प्रकार किसी को अपना आलोचक बना लेना चाहिए जो हमारे दोष बताता रहे। और हमारे में परमात्मा शक्ति दे कि हम प्रतिक्रिया को, हम अपनी आलोचना को स्वीकार करें।** कबीर साहब फरमाते हैं कि मुझे तो मेरा निन्दक, गुरु अति प्रिय है। हे प्रभु! निन्दक को मेरे आंगन में रखो, हमेशा वो हमारे अवगुण देखता रहे, मुझे बताता रहे कि मैं अपने को उसी प्रकार सही करता रहूँ। अपने अवगुणों को दूर करता रहूँ। एक निन्दक ही मेरा सच्चा मित्र है। सच्चा गुरु वो ही है, जो हमारे अवगुण बताता है। सच्चा शिष्य वही है कि जो प्रतिक्रिया करने वाले की बात को मान लें, स्वीकार कर ले, चाहे एक दिन, दो दिन, मनन करके उसकी मानें, परन्तु मान लेना चाहिए। गुरु इसीलिए किया जाता है ताकि वो दोषों को बताए। मनुष्य अपने आप अपने दोषों को नहीं देख पाता है। देखने पर, क्या पता है कि, छोड़ो कल ठीक हो जाएगा, परसों ठीक हो जाएगा। तो हमारा मानना है गंगा में जाकर शरीर का स्नान करेंगे तो हमारे भीतर का भी स्नान हो जाएगा। आलोचकों ने, विशेषकर कबीर साहब ने, बनारस के पंडितों के प्रति बहुत कुछ लिखा, कहा, कि गंगा के स्नान करने से अगर मुक्ति मिलती तो इसके भीतर में जितने भी मेढ़क आदि हैं उनको भी मुक्ति मिल जानी चाहिए। स्नान भीतर का करना है, चाहे

Scanned by CamScanner

भक्ति से करिए, चाहे ज्ञान से करिए। भीतर की मलिनता को दूर करना है। हमारी क्या प्रगति नहीं होती? आनंद ही आनंद ढूढ़ते हैं, परन्तु जो आनंद प्राप्त करने में जो डाल रहे हैं उनको हम दूर करने की कोशिश क्यों नहीं करते हैं? साधना ये ही है। मन को साधना है, तीभी परमात्मा की समीपता के अधिकारी बनेंगे। पहले मन को साधा जाए। इस मलिन मन को साधना है। अपने स्वभाव में परिवर्तन लाना है। अपनी आदतों को सुधारना है। तो कबीर साहब की प्रेरणा को सुनें, किसी ऐसे व्यक्ति को अपना मित्र बनायें, जो हमारे दोषों को बताये और हम खुशी से उस व्यक्ति की बात सुनें और दृढ़-संकल्प से प्रयास करें कि उन त्रुटियों से हम मुक्त हो सकें। ।। ऊँ ।।

Scanned by CamScanner

मन को वश में रखें

"हरि का नाम सदा सुखदाई", क्या अर्थ है? बड़े सरल शब्द हैं परन्तु अर्थ बहुत रहस्यमय है। नाम तो हम भी लेते हैं ऊँ ऊँ, राम–राम, परन्तु जो परिणाम नाम लेने के साथ इस शब्द में सुने, वो स्थिति हमारी नहीं होती, कारण क्या है? हरि जो हमारे दुखों को हरने वाला है, जो हमारे अज्ञान को हरने वाला है, जो हमारे अतीत के पापों को हरने वाला है। उसका नाम वो तो अनामी है। नित्य सुख देने वाला है, कुशलता प्रदान करने वाला है। वो कौन सा नाम है? उदाहरण भी दिया है कि हरि का नाम लेने से गणिका जैसी वेश्या, उसका भी उद्धार हुआ। अजामिल, जो उच्च कोटि का ब्राह्मण था, उसका पिता, अपने राजा के दरबार में गुरु था। पिता की मृत्यु के बाद अजामिल भी पिता के स्थान पर गुरुगद्दी पर विराजमान हुआ। परन्तु युवा अवस्था थी, मन और बुद्धि वश में नहीं थी, बुद्धिजीवि तो अवश्य था अनात्मिकता को दूर कर देता है उसको गुरु कहते हैं। अजामिल को, जो युवा अवस्था में था, शौक था, घूमने का। फिर राजा ने भी समझाया कि तुम अधिक शहर में मत जाया करो, ये एक बाजार बताया कि इस बाजार से तुमने गुजरना नहीं, जाना है। मनुष्य की वृत्ति है, स्वभाव है, कि जिस बात के लिए मना किया जाए उसका मन उसी ओर ही जाता है, और वो बात अवश्य करता है। राजा की बात न मानकर, उत्सुकता उत्पन्न हुई कि क्यों मना किया गया है, वो बाजार में पहले दिन गया। देखा कि वहाँ वेश्यायें रहती हैं। मन ने, बुद्धि ने, जागरूक भी किया कि राजा ने रोक लगाई थी, तुम्हें इस वातावरण में नहीं आना चाहिए। अंग्रेजी में कहते हैं। (Forbidden things are sweet)

Scanned by CamScanner

जिन चीजों को खाने के लिए मना करें, व्यक्ति उन चीजों में रस देखता है, उसके अन्दर मिठास उसको अनुभव होती है। मन ने विरोध किया और वो राज बाजार जाने लगा। दो–चार–पाँच दिन में उसको एक जगह आकर्षण हुआ वो वहाँ गया तो वहाँ ऐसा फँसा कि उसने अपना आध्यात्मिक जीवन खत्म कर दिया।

राजा को पता लग गया, ब्राह्मण से पूछा कि मना करने पर भी तुम क्यों जाते रहे? ब्राह्मण ने सच–सच कह दिया कि क्या करूँ मेरा मन नहीं मानता। कहा ठीक है तुम मेरे शहर से निकल जाओं और जिस स्त्री के साथ तुम्हारा संबंध है उसको भी ले जाओ। उसने भी मेरे राज्य के एक विद्वान व्यक्ति को फँसा है, उसको भी निकालो। तो दोनो चले हैं, जंगल में बसे हैं। पति–पत्नी के तौर पर रहने लगे, संतान भी हुई, काफी वर्ष को गये। ये भी मन का स्वभाव है कि वो अतीत को भूलता नहीं। जहाँ बुरी बातों को भी नहीं भूलता और अच्छी बातों को भी कभी–कभी याद कर लेता है। बहुत उदासीन था कि कितने वर्ष हो गए कि कितनी गंदगी में मैं रह रहा हूँ, मैंने अपना जीवन खराब किया। इतने में एक साधु–संत वहाँ आ गए, उन्होंने भिक्षा मांगी। अजामिल ब्राह्मण तो था, कर्मो के परिणामस्वरूप वो शुद्र बन गया था, परन्तु बुद्धि अभी भी उसकी सूक्ष्म नहीं थी। बातचीत हुई, उसने सब कुछ उस महापुरुष को कह सुनाया, उस महापुरुष ने कहा कि हरि का नाम अर्थात्, भगवान का नाम नारायण, नारायण, नारायण लिया कर। अजामिल कहता है कि ये तो मुझसे नहीं होता। ईश्वर की कृपा थी उसका उद्धार करना था, महापुरुष ने कहा, कहा कोई बात नहीं तुम ईश्वर का नाम मत पुकारो, तुम्हारे शिशु का नाम तुमने नारायण रखा है, तुम बच्चे को बुलाया करो। कुछ महापुरुष की कृपा थी, कुछ

Scanned by CamScanner

संस्कार खत्म हो गए थे, उसने ऐसे भाव से बच्चे को बुलाया, नारायण, नारायण, नारायण कि अजामिल का सारा शरीर रोमांचित हो उठा। बच्चे में भी नारायण के दर्शन हुए, और अपने भीतर में भी नारायण के। उस महापुरुष के चरणों में गिर गया। एक दफ़ा हरि का नाम लिया, तो इतना गिरा हुआ शख्स था उसका भी उद्धार हो गया। तो महापुरुष कहते हैं 'हरि का नाम सदा सुखदायी।' जिज्ञासु जब ईश्वर के साथ प्रेम का सम्बंध स्थापित करता है, ये नाम एक सीढ़ी है, उस परिणामस्वरूप मनुष्य में एक विशेष प्रकार का परिवर्तन आ जाता है अर्थात् जो गुण नारायण के हैं, हरि के हैं, गुरु के हैं, धीरे–धीरे वो सच्चे जिज्ञासु में आ जाते हैं।

तू-तू करता तू भया, मुझ में रही न हूँ।
आपा फिरका मिट गया, जत देखां, तत तू।।

नाम परमात्मा का है। उसे हरि के नाम से पुकारिए, नारायण के नाम से पुकारिए, राम के नाम से पुकारिए, परन्तु नाम के साथ भाव होना चाहिए। महापुरुष कहते हैं कि बिना भाव के भक्ति नहीं होती। यहाँ भक्ति के अर्थ ये हैं कि जिज्ञासु का योग परमात्मा के साथ नहीं है। हम सब भी जो नाम लेते हैं, भाव के साथ नहीं लेते हैं। राम, राम, राम, राम करते रहते हैं, ठीक है लोग–बाग इसकी प्रतिक्रिया भी करते हैं 'विश्वामित्र ने राम, राम कहा बाद में मार, मार कहने लगे। परन्तु विश्वामित्र के मन में भाव था जो परमात्मा के दर्शन करने हैं। वो मार का ही ये अर्थ समझता रहा कि राम, सब जगह रमता है, सर्वव्यापक है। विश्वामित्र ने भाव को अपनाया था। राम की जगह मार, मार कहा तो कोई बात नहीं है। परमपिता परमात्मा समझते हैं कि सच्चे जिज्ञासु के

Scanned by CamScanner

हृदय में क्या भावना है। हमारे आचार-व्यवहार, रहनी-सहनी को वो देखते हैं। इसलिए कहते हैं। 'बिन गुण कीते भक्ति न होई।' यानि जब तक भावना नहीं आयेगी, गुण नहीं आएंगे परमात्मा के, हमारी भक्ति में सफलता नहीं आएगी। नाम के अर्थ केवल राम-राम कहना नहीं है। नाम के अर्थ हैं, 'तू तू करता, तू भया, मुझ में रही न हूँ, नाम लेता हुआ जिसका नाम ले रहा हूँ। मैं वैसा ही हो जाऊँ। मुझमें रही न हूँ, मेरे भीतर में ये अहंकार कि मैं कुछ हूँ, मैं ईश्वर से पृथक हूँ। मैं आत्मा नहीं हूँ, मैं आत्मा से भिन्न हूं, ये जो अहंकार है ये खत्म हो जाना चाहिए। जब तक अहंकार की दीवार है, तब तक न आत्मा की अनुभूति हो सकती है न परमात्मा के दर्शन हो सकते हैं। एक क्षण भर के लिए अजामिल ने महापुरुषों का संग किया और नारायण कहा, और उन्होंने भी पीछे से शक्ति दी। अजामिल के अन्दर से यानि हृदय की गहराई से शब्द निकला 'नारायण' आंखें मुंद गई, शरीर रोमांचित हो उठा, प्रभु के दर्शन हो उठे। जो अहंकार था, जो आसक्ति थी बुरी तरफ वो जाती रही। निर्मलता आ गई, नामी का रूप आ गया, आत्मा का रूप आ गया, परमात्मा का रूप आ गया। अजामिल का संस्कार भंग हो गया।

जब हम ईश्वर के गुणों को याद करते हैं तो हमें ईश्वर की समीपता प्राप्त होती है। साधना करते-करते जिज्ञासु सहज बोल उठता है, 'अहम् ब्रह्मास्मि', मैं तो वो ही हूँ जो ब्रह्म है, मैं ये शरीर नहीं, मैं ये प्राण नहीं, मन नहीं, बुद्धि नहीं, आनंद नहीं, आत्मा परमात्मा एक है। वो कहता नहीं, वो अनुभव करता है। वाक तो अवाक हो जाता है, भीतर का मन भी शान्त हो जाता है। उस अवाक स्थिति में वो अपने स्वरूप या परमात्मा के स्वरूप का अनुभव करता है,

Scanned by CamScanner

इसको हम दर्शन भी कहते हैं, तदरूपता हो जाती है, अब कितनी होती है तदरूपता ये निर्भर करता है व्यक्ति की निर्मलता पर, अहम् की निर्मलता पर। किसी को दर्शन होते हैं, अनुभूति होती है, क्षण-भंगुर होती है, एक सैकेण्ड के लिए होती है, किसी को दस सैकेण्ड के लिए होती है, किसी को दस मिनट के लिए होती है, क्योंकि ये शक्ति इतनी महान है कि इसको सहन करना अति कठिन है। जो व्यक्ति गर्म चाय नहीं पीता यदि उसको एकदम आप गर्म चाय पिलाएंगे तो उसकी जुबान जल जाएगी, परन्तु जिसको आदत पड़ी हुई है, जिसका स्वभाव है गर्म चाय पीने का, उसको कोई कष्ट नहीं होगा। धीरे-धीरे, धीरे-धीरे इस रास्ते पर जल्दी नहीं करनी चाहिए। पूज्य गुरु महाराज कहा करते थे, जल्दबाजी नहीं करनी, जो जल्दी करेगा वो कुएं में गिरेगा, वो अहंकारी हो जाएगा। अहंकार आया, तो अहंकार की संतान जो हैं, सारे अवगुण उसके भीतर में आ जायेंगे। हम रोज नाम लेते हैं परन्तु हमारे भीतर में कोई अन्तर नहीं आता सारे अवगुण अभी तक हैं। शरीर के साथ हम इतने चिपके हुए हैं कि तनिक सी तकलीफ़ होती है, घबरा जाते हैं, मन के साथ चिपके हुए हैं, बुद्धि के साथ चिपके हुए हैं, सबसे अधिक अहंकार के साथ चिपके हुये हैं, ये सत्य है। आदर्श हमारा ऊँचा होना चाहिए, परन्तु उस ऊँचे आदर्श की प्राप्ति के लिए हमेशा साधना भी उसी के अनुकूल ही करनी चाहिए। हमारी रहनी-सहनी, व्यवहार, आदि साधना के अनुरूप नहीं है। परिवारों में झगड़े, तनाव, सब कुछ है तब भला ईश्वर कहाँ से आएगा? ये तो कोई पिछले कुछ कर्म अच्छे होंगे तो होगा जैसे अजामिल का उद्धार हो

Scanned by CamScanner

गया, गणिका का उद्धार हो गया। तो निवेदन यह है कि हमें गम्भीर होना चाहिए। नाम क्या है? नामी कौन है? किसका नाम ले रहे हैं? इसके प्रति गंभीर होना चाहिए। ईश्वर प्राप्ति के लिए योग्य साधना करनी चाहिए। अपनी स्थिति के अनुकूल साधना करनी चाहिए। सर्वश्रेष्ठ तो ये है कि हम किसी प्रकार अपने अहंकार का परित्याग करें। हम सब अहंकारी हैं, किसी को शरीर का गुमान है, किसी को अपने मन की चालाकी पर अहंकार है, किसी को बुद्धि का अहंकार है, किसी को सदगुणों का अहंकार है, किसी को पैसे का अहंकार है। आपको कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिलेगा जो अहंकार शून्य हो, सच्चे अर्थों में दीनता का प्रतीक हो। हमें योग्य बनना है, केवल राम–राम कहने से कुछ नहीं होगा। पाँच शरीर है – शरीर, प्राण, मन, बुद्धि, आनंद। इन पाँचों शरीरों को संवेदनशील बनाना पड़ेगा। नामी की कृपा तो सब पर हो रही है। अमृत–धारा तो उसके पवित्र चरण कमलों से सब पर पड़ रही है, परन्तु हमें योग्य पात्र बनना है, उस अमृत को ग्रहण करने का, उस नाम को ग्रहण करने का। इसीलिए इसको साधना कहते हैं। हमें शरीर को भी साधना है। प्राणों को भी साधना है, मन को भी, बुद्धि को भी, आनंद को भी, ऐसा बनाना है, जैसा हरि का रूप है, इससे कम नहीं, इससे कम स्थिति होगी तो हरि नहीं मिलेंगे। केवल जल ही जल में मिल सकता है। जल में पत्थर मिलने से बहुत देर लगेगी, लाखों वर्ष लग सकते हैं। हमारी स्थिति एक पत्थर की तरह है, दांतों की तरह है:

Scanned by CamScanner

''ज्यों जल में, जल आए खटाना,
त्यों ज्योति संग जोत समाना।।
मिट गए गमन, पाए विसराम,
नानक प्रभु के सब पूरण काम।।''

जल बनना है, ईश्वर को मिलने के लिए हमें ईश्वर बनाना है, इससे कम नहीं। जब तक ऐसा नहीं करेंगे, तब तक जन्म–मरण के चक्कर में पड़े रहेंगे और सच्ची शान्ति, जिसके हम अभिलाषी है, खोजी हैं, वो नहीं मिलेगी। तीसरे गुरु, "श्री गुरु अमर दास जी" वृद्ध अवस्था में, उन्होंने गुरु धारण किया और पन्द्रह साल के करीब उन्होंने साधना भी की है। बहुत वृद्ध आयु में गुरु बने हैं। जब जाकर गुरु की कृपा उन पर हुई है, वे रात को अपने बाल बाँध देते थे, दीवार के साथ खूंटी के साथ, ताकि नींद न आए। 70 साल की आयु के बाद गुरु किया है। जब गुरु हो गए, 85 साल की आयु में तकरीबन, तो आपने वाणी उच्चारण की है, इतनी मधुर है, और व्यावहारिक है, कहते हैं :–

''आनंद भया मेरी माये, सत्गुरु मैं पाया।''

ये आनंद क्या है? पूरी–कचौड़ी खाई, उसका रसास्वादन आया तो वो आनंद आया? नहीं। सत्गुरु की प्राप्ति हुई है। 85 साल की आयु में, लगातार साधना के पश्चात्। तो क्या हुआ, आनंद मिला, आत्मा का आनंद मिला। "सत्गुरु तो मिलिया, सहज मेतो बजिया बँधाइयाँ।" यानि सरलता से

Scanned by CamScanner

सतगुरु मिल गया। इतने साल कोशिश करता है, पहले तो ज्ञान ही नहीं था कि गुरु कैसे होते हैं। जब शुरु किया तो सरलता से, गुरु की कृपा से सच्चा नाम मिला। तो वर्णन करते हैं– "राग तरन प्रवाह भरिया", सारा शरीर रोमांचित हो उठा, अन्तर–बाहर एक हो गया। अपने को तो प्राप्ति हुई, पर औरों को भी प्रेरणा देते हैं।

"संत तू गावों हरि के नाम, मन में बसाओ।"

उसी हरि का, अभी हरि का शब्द सुनते रहे थे, उसका नाम हृदय में बसाओ। हृदय के अर्थ, हृदय में भी है और दूसरे अर्थ हैं ये रोम–रोम में हरि रूप हो जाओ।

"कह नानक आनंद हुआ, सत्गुरु मैं पाया।"

जिसको सतगुरु की, सच्चे सतगुरु की प्राप्ति हो जाती है उसको यदि अत्मिक आंनद की अनुभूति नहीं होती है या तो शिष्य में दोष है या कथित गुरु में दोष है। वो रोग कहते हैं अज्ञान को, राग कहते हैं दूर करने वाले को। इसीलिये सभी महापुरुष कहते हैं सोच–समझकर गुरु करना चाहिए, जब तक आपको संकेत न मिले कि वो शख़्स मेरा अज्ञान दूर कर देगा, अर्थात् अनात्मिकता को दूर कर देगा, तब तक किसी के चरणों में समर्पण नहीं करना चाहिए, जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए। तो खैर कहने का अर्थ ये है कि हम हरि के समान हो जायें, कठिन है। 24 घंटे की साधना है और मैं बार–बार कहा करता हूँ जो हमारी दिनचर्या है इसको

Scanned by CamScanner

साधना रूप बनाना चाहिए या साधना के अनुरूप बनाना चाहिए। हम सारा दिन तो बुरे कर्म करेंगे, बुरे विचार उठायेंगे, प्रातः–सायं यदि बैठे दो–चार मिनट के लिए, मन नहीं लगा, रोटी बनानी है, पति को दफ़्तर जाना है, तो ये साधना नहीं है। अपने–आपको संवेदनशील बनाना है ताकि गुरु और ईश्वर की कृपा, जो आप पर बरस रही है, उसको ग्रहण कर सकें, जज़्ब कर सकें, और वैसा बन सकें। गुरु का दोष नहीं, ईश्वर का दोष नहीं।

''झिम झिम बरसे अमृत धारा।''

ईश्वर की कृपा आत्मा की वृष्टि तो सब पर एक जैसी है, मूसलाधार बारिश की तरह हो रही है। इसीलिए परमात्मा को दयानिधि कहते हैं, दया के सागर हैं। वो संकोच नहीं करता है। हमने अहंकार की दीवार खींची है, उसी के कारण, हम अपना समय व्यर्थ गवां रहे हैं। जिसका नाम लेते हैं उसको समझना चाहिए कि उसका रूप कैसा है, उसका नाम कैसा है, उसके गुण कैसे हैं, क्योंकि हमारे जीवन का ध्येय ये है कि हमने वैसे बनना है जो हमारे इष्टदेव हैं, परमात्मा हैं। 24 घंटे का यज्ञ है। इसमें त्याग की आवश्यकता है जो हम कर नहीं पाते हैं। हाँ आंशिक रूप में कुछ–न–कुछ तो प्रत्येक कर्म का फल होता है, उतना फल तो मिलेगा। परन्तु जैसा आप चाहते हैं या जैसे महापुरुष कहते हैं या जैसे शास्त्रों में लिखा है, वैसा नहीं होगा, भीलनी जैसी तपस्या करनी होगी। द्रोपदी जैसी, हृदय से पुकार जब निकलेगी, तब

Scanned by CamScanner

भगवान प्रकट होंगे, वो भी देख रहे हैं ये तमाशा। ईश्वर हमारा तमाशा देखता है। व्याकुलता, व्याकुलता, अपने-आप को खत्म करने का निर्णय। हम तो दिन-ब-दिन भटकते जा रहे हैं, त्याग या वैराग्य के या तो हमें अर्थ समझ नहीं आते। आते हैं तो हम सोये हुए हैं, उन अर्थों के प्रति। बिना त्याग किए और बिना वैराग्य के, साधना में सफलता मिल जाए, यदि असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। इसीलिए करबद्ध प्रार्थना है आपसे, बार-बार एक ही शब्द कहता हूँ, गंभीरता अपनाइये, गंभीरता, गंभीरता। यदि एक शब्द, एक अक्षर गंभीतरता से पढ़ लीजिए, उस पर मनन कर लीजिए, उस पर निध्यासन कर लीजिए और वैसा बन जाइये। सैकड़ों शास्त्र पढ़ लीजिए, वो एक तरफ़ और एक शब्द की साधना वो एक तरफ़। वो कहीं अधिक है। एक शब्द, केवल एक शब्द। मनन करना चाहिए, मनन। ।।ॐ।।

Scanned by CamScanner

सेवा को अपनाएं

सत्संग में आकर सद्गुण होने चाहिए। पूज्य गुरु महाराज फ़रमा रहे हैं, जिन पर ईश्वर की कृपा हो जाती है, अपने बल–बूते कुछ नहीं होता है, सेवा का भाव पैदा हो जाता है। नदी का जल बहता रहता है। धरती को पानी देता, धरती पानी को लेती है, उसमें खेती होती है, खेती उपजति है, संसार को लाभ पहुँचता है। नदी कुछ नहीं माँगती धरती से, वो जल दिए जा रही है। गंगा का जल बहता है, बह रहा है। लोग आते हैं, स्नान करते हैं, पवित्र होते हैं। अमृत जल लेते हैं, और घर भी लौट्ते हैं तो गंगा जल लेकर आते हैं। ऐसा गुण साधक में होना चाहिए, कि वो अपना शरीर, अपना मन, अपना धन, अपना सब कुछ, संसार की सेवा में, अप्रयास, बिना प्रयास के लगाता रहे। अर्थात् संसार को बिना किसी आशा के सब सुख पहुँचाता रहे। ये उसका सहज स्वभाव हो जाए, नहीं की तरह, तब उसे समझना चाहिए कि वो सच्चा जिज्ञासु है। उसको नींद न आए, जब तक वो दूसरों को, सुख न पहुँचा सके। उसकी सहज स्थिति होती है। गुरुवाणी में भी आता है, 'ब्रह्मज्ञानी ते कछु बुरा न भया' उससे किसी का बुरा नहीं होता, अपितु उससे भला ही भला होता है, भला ही भला होता है। हम सोचते रहते हैं कि फलाना व्यक्ति अच्छा है, फलाना व्यक्ति बुरा है। सच्चा जिज्ञासु जो है उसके हृदय में उसके मस्तिष्क में ये बात आती ही नहीं

Scanned by CamScanner

उसको सभी में परमात्मा स्वरूप दिखते हैं और परमात्मा स्वरूप देखकर वो सबकी सेवा करता है।

दूसरा गुण है, सूर्य की तरह उदारता का। सूरज सबको दर्शन देता है, सब पर अपना प्रकाश डालता है, सब पर अपनी रोशनी प्रदान कर रहा है, सब पर गरिमा डाल रहा है, परन्तु कुछ नहीं मांग रहा है, कोई पापी है तब, कोई पलीत है तब। सब पर एक जैसी ऊष्मा बांट रहा है, देता रहता है, देता रहता है, देता ही रहता है। गंगा नदी भी ऐसे ही बहती है। सूर्य भगवान भी ऐसे ही प्रकाश देते हैं, ऐसी ही ऊष्मा प्रदान करते रहते हैं। सूर्य की ऊष्मा न हो तो संसार का विनाश हो जाए। संसार कायम है, वो सूर्य के कारण है। इसी तरह सच्चे जिज्ञासु में भी उदारता होनी चाहिए। बिना प्रयास के उसका सहज स्वभाव होना चाहिए। कोई उससे दुश्मनी करता है, वो उसके पाँव पकड़ता है, वो उसको सुख पहुँचाता है। शेख फ़रीद जी कहते हैं जो तुम्हें गाली देते हैं, तुम उसके घर जाओ, उसके घर जाकर उसके पाँव दबाओ। ये साधना केवल आँख बन्द करना नहीं है, आँख बन्द करना तो पहली कक्षा है। हम लोग काफी आगे बढ़ चुके हैं। सोचना चाहिए, स्वनिरीक्षण करना चाहिए कि हममें क्या परिवर्तन आया है अब तक? क्या हमारा स्वभाव नदी की तरह हो गया है। क्या हम जीव, दानी सूर्य भगवान से बन गए? मंजिल बहुत दूर है। अभी कुछ भी नहीं हुआ। भाई लोग कहते हैं। परन्तु हमने अभी तक ईश्वर के गुणों को अपनाया नहीं है। पूज्य

Scanned by CamScanner

गुरुदेव बेशक जिज्ञासु के गुणों का वर्णन कर रहे हैं, वास्तव में ये परमात्मा के ही गुण है, और परमात्मा की ही कृपा से, सच्चे जिज्ञासु में वो गुण, जब तक नहीं आते, तब तक वो अधिकारी नहीं बनता है। "ब्रह्मज्ञानी पर-उपकार" वो उसके भीतर में उमंग होती कि किस तरह दूसरे का भला करें। उसका सहज-स्वभाव होता है। वो बनकर नहीं करता ऐसा। वो उसकी वृत्ति है। जैसे नदी की वृत्ति है बहना, बहना और दूसरे को सुख पहुँचाना। सूर्य की वृत्ति है, ऊष्मा देना, वो अपने-आप, जान बूझकर नहीं करता है। इसी तरह सहज स्थिति जिज्ञासु की बन जाए। तो पहला गुण बताया है नदी का। दूसरा बताया है सूर्य का। तीसरा बताया है धरती का। जिज्ञासु में सहनशीलता होनी चाहिए, धरती समान। ब्रह्मज्ञानी के प्रति लिखा है कि ब्रह्मज्ञानी का भी ऐसा स्वभाव होता है जैसे धरती का। बड़ी सहनशीलता है। हम किस प्रकार के जूते पहनकर चलते हैं; धरती कुछ नहीं कहती, हम गंदगी डालते है, धरती रोती नहीं, खुदाई करते हैं, धरती रोती नहीं। ये धरती का जो स्वभाव है, महान ऊँचे से ऊँचे ज्ञानियों का स्वभाव है। ब्रह्मज्ञानी का एक नाम, जो धरती का सहज स्वभाव है। धरती और अग्नि का सहज स्वभाव है। बड़ा कठिन है। हमें कोई जरा सी बात कह देता है तो आग लग जाती है। तो ये साधना नहीं है। हमें ये अभ्यास करना होगा, कोई हमारे पर पत्थर फेंकता है, हमें गाली देता है, लड़ाई करता है, हमारे में सहनशीलता होनी चाहिए। हमारे देश में स्त्री की और धरती की, इन दोनों की पूजा की जाती है क्योंकि दोनों में यही गुण है, सहनशीलता

Scanned by CamScanner

है। पुरुषों में सहनशीलता बहुत कम है। वर्तमान में, बहनें क्षमा करेंगी, वो अपने गुणों को भूलती चली जा रही हैं और नयी, पश्चिम की जो संस्कृति आ रही है, उससे प्रभावित होती जा रही है। बुरा मत मनायें। यहाँ प्रत्येक स्त्री माँ रूप थी, पूजा होती थी, मंदिरों में, गुरुद्वारों में, सब जगह, घर में तो होती ही थी। उनका दोष नहीं है, ये सभ्यता का प्रभाव इतने जोर से, इतने वेग से आ रहा है कि हम अपने गुणों को, जो ईश्वरीय गुण है, ईश्वर की समीपता है हमारे में, हम उसको कूड़े-करकट में फेंक रहे हैं। तो सच्चे जिज्ञासु के भीतर में, पूज्य गुरुदेव कह रहे हैं कि तीन गुण होने चाहिए, नदी की तरह दूसरे की सेवा करें, सूर्य की तरह दूसरों को लाभ पहुँचायें, उनको जीवन दान देना, धरती की तरह सहनशीलता, सहनशीलता, सहनशीलता। बिना गुणों के भक्ति नहीं होती। भक्ति के अर्थ हैं, चाहे ज्ञान की साधना करें, चाहे प्रेम की साधना करें, बिना गुणों के कोई भी, किसी प्रकार की भी साधना सफल नहीं हो सकती। यहाँ भक्ति के अर्थ है, साधना। "बिना गुण भक्ति न होय।" इतने ऊँचे गुण होने चाहिए तब हम अधिकारी बनते हैं।

आज सुबह किताब खोली, मेरी आँख चौंधियाने लगी कि ये क्या लिखा है? अपने आपको स्वनिरीक्षण करके देखा, ये तो बिल्कुल कोरा है, कोरा ही कोरा। कहाँ गुण है वो धरती जैसा, कौन गुण है नदी जैसा, कौन गुण है सूर्य जैसा। भगवान कृष्ण भी गीता में सूर्य का ही उदाहरण देते हैं, अर्जुन

Scanned by CamScanner

को। तू कर्म कर जैसे सूर्य भगवान कर्म करते हैं, मैं भी कर्म करता हूँ, मुझे भी कर्म का फल नहीं लगता है। सूर्य भगवान भी इतनी सेवा करते हैं, इतने कर्म करते हैं, उनको भी कर्म का फल नहीं लगता। तू भी कर्म कर, परन्तु कर्म के फल की आशा मत रख। आशा, कर्म के फल का प्रभाव तुम्हारे ऊपर नहीं पड़ना चाहिए। बुरा हो चाहे भला हो। ये जीवन की एक साधना है। हम जो भी कर्म करते हैं आशा रख के करते हैं। किसी ने अच्छी बात कही, प्रसन्न हो जाते हैं, किसी ने गलत बात कह दी, अयोग्य बात कह दी, तुरन्त गुस्सा आ जाता है। ये तो साधना नहीं है। अभी हमारी मंजिल बहुत दूर है। धबरायें नहीं चलते जाइये। चलते जाइये। परन्तु आदर्श हम सबको यही रखने होंगे, ये स्थिति जब ईश्वर कृपा से आ जाती है तब परमात्मा का मिलन, सच्चे पति के मिलन, सच्ची माँ के दर्शन तुरन्त हो जाते हैं। अब भी चित्त में बड़ी मलीनता है। बड़ी कठोरता है। मुलायमियत नहीं है, दृढ़ता नहीं है। लोग–बाग समझते हैं आँखे बन्द कर ली यही काफी है। नहीं। मैं ये बार–बार कहता हूँ, सतगुणों को अपनाएं। जब तक सतगुणों को नहीं अपनायेंगे, सत्गति नहीं आएगी, मन में कोमलता नहीं आएगी। कोमल मन स्थिर हो सकता है स्थूल मन स्थिर नहीं होता है। ये कोमल होकर ही आत्मदेश में प्रवेश पा सकता है। उससे पहले नहीं। ये अधिकारी तभी हो सकता है जब इसमें कोमलता आ जाती है। पुष्प की तरह इसको खिलना चाहिए, अप्रयास सबको ही सुगन्धि ही सुगन्धि प्रदान करनी चाहिए, जिव्हा में, वाणी में कठोरता नहीं

Scanned by CamScanner

आनी चाहिए। आज तीन बातों पर ही मनन करें घर जाके और आगे के लिए प्रयास करें। मुझे आशा है, विश्वास है कि आप लोग भूलेंगे नहीं इन तीन बातों में, इनमें परिपक्वता आएगी, देर लगेगी, चिन्ता मत करिये, कोई आपसे बुरा-भला नहीं कहेगा, परन्तु अभ्यास आज से ही शुरु कर दीजिए। मैं पिछले महीनों से, कई महीनों से बार-बार कहता आ रहा हूँ कि परिवार में एक-दूसरे से सहयोग होना चाहिए जो व्यक्ति परिवार में सफल हो जाता है वो संसार में भी सफल हो जाता है और परमात्मा के पद पर भी सफल हो जाता है। ये पूज्य गुरु महाराज ने जो लिखे हैं तीन गुण, ये प्रेमी भाइयों के लिए, परिवारिक जीवन जो व्यतीत करते हैं, विशेषकर उनके लिए लिखे हैं। मुझे आशा है कि आप इन गुणों का अपनाकर मुझे अपना आभारी बनाएंगे। गुरुदेव आप सबका भला करें।

Scanned by CamScanner

सन्तमत का महत्व

"हमारे यहाँ ज्ञान मार्ग और भक्ति मार्ग दोनों को साथ–साथ लेकर चलते हैं। जहाँ तक लक्ष्य का सम्बन्ध है हमारे यहाँ केवल एक ईश्वर को मानते हैं, जो सर्वभूतों का आधार है। जो अनंत अनादि है, और जो वर्णन में नहीं आ सकता।

भाइयों को मन में गलतफ़हमी नहीं रखनी चाहिए। आदिकाल से ईश्वर की प्राप्ति के कई साधन हैं, कई साधन रहे हैं और इन साधनों के कारण सम्प्रदाय बन गये और आपस में शास्त्रार्थ होता है, तर्क–वितर्क होता है कि क्या भक्ति उत्तम है या ज्ञान उत्तम है ? हमारे देश में शास्त्रार्थ एक बहुत बड़ी संस्था थी। कुछ पिछले पन्द्रह–बीस साल से देख रहा हूँ कि शास्त्रार्थ नहीं होते हैं। नहीं तो उस काल में होता था परन्तु ये सब शास्त्रार्थ आदि जो भी हैं ये संकीर्णता है, ये ह्रदय की विशालता नहीं है। प्रत्येक मनुष्य का अपना धर्म है। करोड़ों व्यक्ति हैं तो करोड़ों व्यक्ति के करोड़ों धर्म हैं। मुख्यतः भक्ति का मार्ग है, ज्ञान का मार्ग है। तो संतमत में दोनों को लिया जाता है किसी प्रकार का तनाव नहीं है, झगड़ा नहीं है। जैसे–जैसे किसी व्यक्ति की वृत्ति होती है महापुरुष उस जिज्ञासु की वृति के अनुसार उसको साधना बतला देते हैं। आसाम में गुरु नानक देव गये हैं और वहाँ दो मित्र गुरुदेव की सेवा में आए हैं, बातचीत हुई है। एक को ज्ञान का उपदेश दिया है दूसरे को भक्ति का उपदेश दिया है। तब वो दोनों चले गए। तो मर्दाना जो उनके मुसलमान मित्र थे गुरुदेव

Scanned by CamScanner

से पूछने लगे कि क्या बात है, किसी को कोई मार्ग बता देते हैं, किसी को कोई मार्ग बता देते हैं, एक ही मार्ग क्यों नहीं बताते हैं ? तो गुरुदेव ने समझाया जिसको भक्ति का साधन बताया है उसके अतीत के संस्कार भक्ति की ओर हैं, और दूसरे को ज्ञान का साधन बताया है, उसके संस्कार बुद्धि के संस्कार हैं इसलिए पृथक–पृथक साधना बताई है। वास्तव में भेद कुछ नहीं है, आगे चल कर दोनों एक हो जाते हैं, मन और बुद्धि। मन भक्ति से रीझता है। बुद्धि बुद्धि की बातों से रीझती है। ये दोनों बातें प्रत्येक मनुष्य में होती हैं। किसी में मन प्रधान है, किसी में बुद्धि प्रधान है। तो अकारण तर्क वितर्क नहीं करना चाहिए। लक्ष्य हमारा ये है कि किसी प्रकार जिज्ञासु को अपनी आत्मा का या परमात्मा का अनुभव हो जाए तथा वो उसी प्रकार बन जाए। कबीर साहब समझाते हैं भक्तों को –

"तू तू करता, तू भया, मुझमें रही न हूँ।
आपा फिरका मिट गया, जत देखां तत तूँ॥

भक्ति में तू–तू, तू–तू करते हैं। समझते हैं, कुछ नहीं अपना शरीर भी, अपना तन भी, अपना मन भी, अपना धन, अपनी बुद्धि भी, सब अपने प्रीतम में चरणों में अर्पण कर देते हैं। और ज्ञानी, "एक कहूँ तो है नहीं दो कहूँ तो झूठ, तीन कहूँ तो गार, तू जैसा है वैसा रहे। कहत कबीर विचार।" ये दोनों विचार कबीर साहब के हैं। ज्ञानी कहता है कि आत्मा और परमात्मा एक है। कबीर साहब कहते हैं ये भी गलत है कि ज्ञान की शिखरता पर पहुँच कर, कहते हैं कि, कौन कहेगा कि एक

Scanned by CamScanner

है या दो है। कहे बिना रहते नहीं हैं जिसके प्रति कहा जाता है उसका कोई अन्त नहीं है। एक शब्द भी अपेक्षित हो जाता है, एक दो, तीन अपेक्षित हो जाता है। उसका भी कोई अस्तित्व होता है। परमात्मा, परमात्मा तो बेअंत है। अथाह है, सागर का भी तो अंत होता है, परन्तु परमात्मा का तो कोई अंत है ही नहीं वो तो बेअंत है। गुरु नानक इस 'अन्त' के शब्द को लेकर आप में सफल रहे हैं। क्या गुण गांऊ, क्या कुछ कहूं? अपने–आप को खो दिया, अपनत्व खो दिया। 'एक कहूं तो है नहीं, दो कहूं तो झूठ।'' ज्ञानी दो की बात को नहीं मानता है। ये तो झूठ है, माया है, अज्ञान है। जैसे आईजक न्यूटन एक बड़े विज्ञानी थे, साईंटिस्ट (scientist) थे, कहते थे मैं सागर के तट पर खड़ा हूँ और कंकर चुन रहा हूँ। एक संसार की विद्या के लिए एक महान पुरुष ऐसा कहता है। और परमात्मा के लिए हम कह दें कि हमने जान लिया है। पूर्ण रूपेण से जान लिया है। गुरु महाराज कहा करते थे। ''हनो दिल्ली दूरस्त।'' दिल्ली जो है, हमारी जो यात्रा है, हमारा जो अन्त है, मेन (main) लक्ष्य है, ये बहूत दूर है। पूर्ण रूप से उसे किसी ने नहीं देखा है। तदापि मनुष्य चोला मिला है, इसी शरीर में, इसी मनुष्य चोले में मनुष्य प्रभु की समीपता प्राप्त कर सकता है। परमात्मा के लक्ष्य को, परमात्मा के स्वरूप को कुछ–कुछ जान सकता है। अपने–आप को समझ सकता है, परमात्मा हमारे भीतर में भी है, आत्मा के रूप में है। उस आत्मा की जानकारी कुछ–कुछ कर सकता है परन्तु पूर्णतः पूर्ण रूपेण से जानकारी कर लेना बहुत कठिन है, बहुत कठिन है, बहुत कठिन है। कहना तो नहीं चाहिए, देवी–देवता भी पूर्ण

Scanned by CamScanner

रूप से नहीं कह पाए, किसी महापुरुष की वाणी में कहीं नहीं आया है। भक्त जो है वो चकित हो जाता है कि क्या लीला है भगवान की। भक्त आगे बढ़ता है तो विस्माद में आ जाता है, हैरान हो जाता है। कितना संसार है कि एक हमारा भारत देश नहीं, एशिया है, यूरोप है, अमेरिका है। ये तो एक मण्डल है, एक मण्डल नहीं, हज़ारों मण्डल है। अब तो विज्ञान भी कह रहा है कि एक धरती नही, हज़ारों धरती है। हम अपने परिवार का प्रबंध करने में असमर्थ होते हैं तो महापुरुष कहते हैं कि आप इतने मण्डलों का प्रबंध कैसे करते हैं। ये भी एक भक्त की साधना है, विस्माद। पूज्य गुरुदेव पुस्तक पढ़ा करते थे सुदर्शन। 40 कहानियाँ हैं। 40 तरीके से उस महापुरुष ने परमपिता परमात्मा की समीपता प्राप्त करने के रास्ते बताए थे। आखीर में चालीसवीं कहानी में विस्माद की बताई थी। संतों ने विस्माद पर विशेष महत्व दिया है, कि तेरा रूप कैसा है। कोई कहता है, सांवला है, कोई कहता है भगवान राम जैसा बड़ा ही सुन्दर है, भगवान विष्णु जैसा बड़ा ही सुन्दर है, कोई कहता है, भगवान शिव है, वो जो मिट्टी लगाई हुई है। कोई कहता है उसका रूप ही कुछ नहीं है, तो आखिर तू है ही क्या? एक नाद नहीं है, हज़ारों नाद है। हज़ारों आवाजे हो रही है, लाखों आवाजें हो रही है। विस्माद ही विस्माद है। ज्ञान सीमित है चारा वेदों में भी ये चार वेद क्या, हज़ारों शास्त्र लिखे गए हैं। परन्तु भगवान भी कहते हैं कि नहीं, ये भी अंत नहीं है तो अंत है क्या? भगवान भाव के भूखे हैं। भाव अपने के प्रति ही दृढ होता है। किसी ने भगवान को दूध पिला दिया, खाना खिला दिया, तो नामदेव जी

Scanned by CamScanner

ने दूध पिलाया। धन्ना जाट ने भगवान कृष्ण को खाना खिलाया। कितनी सरलता है, पंडित बड़े ईष्यालु हो गये कि इसने पत्थर पूज के भगवान के दर्शन किए और खाना खिलाया। वो पत्थर चुरा ले आए। उस पत्थर की पूजा करने लगे। बड़ी पूजा की, बड़ी पूजा की, परन्तु भगवान ने दर्शन नहीं दिये। इसमें अन्तर क्या था। धन्ना जाट सरल था, नामदेव बचपन में सरल थे। सरलता एक गुण है, महान गुण है। बुद्धि इस रास्ते पर रुकावट डालती है। धन्ना कहता है कि मै तो रोटी नहीं खाऊंगा जब तक भगवान आप नहीं खाओगे। नामदेव डंडा लेकर आते है, भगवान दूध नहीं पीते तो मैं डंडा मारूंगा। आप कहेंगे कि ये भी भक्ति है ? हां (Everything is fair in love and war)। इस भक्ति में सब चीज योग्य है, जायज है। किसके लिए जायज़ है ? उसके लिए ज़ायज है जिसके ह्रदय में लचक है, सरलता है, अहंकार नहीं है, दीनता है। तो कभी भी, भूलकर भी, जो जैसे भी पूजा करता है, परमात्मा को पाने का प्रयास करता है, जिसके तरीके से भी, कभी भूलकर भी उसका खण्डन नहीं करना चाहिए। खण्डन–मण्डन मन की बड़ी नीची अवस्था है। तो गुरुदेव कह रहे हैं, दो मुख्य साधन रहे हैं, और हम दोनों को नहीं मानते, भक्ति प्रेम और ज्ञान। परन्तु धीरे–धीरे उसको ऐसे मार्ग पर ले आते हैं। जहाँ साधक को भक्ति में भी आनंद मिलता है और बुद्धि के मार्ग, ज्ञान मार्ग में भी आनंद मिलता है। तनाव उत्पन्न नहीं करते हैं। जो दोनों में भेद देखता है वो अभी मन के स्थान पर है, वो अहंकार के स्थान पर है। मूर्ति भी पूजा के योग्य है, मनुष्य भी पूजा के योग्य है। और बगैर रूप के, बगैर नाम के जो परमात्मा

Scanned by CamScanner

है उसे ज्ञान साधन कहते हैं। **अन्तिम मंजिल कह रहा हूँ कि अपने अस्तित्व को मिटा देना है।** क्रिस्चियनिटी (Christianity) में उदाहरण देते हैं कि शुरू में परमात्मा ने उद्यान बनाया, बाग बनाया और दो जीव वहाँ रखे हैं। और कहा कि ये एक वृक्ष है, इसका फल नहीं खाना है। परमात्मा ने दोनों जीवों को अपने जैसा ही बनाया था। परन्तु माया के समीप छोड़ दिया है जब तक व्यक्ति परमात्मा के रूप में समाया रहता है, मैं और तू में झगड़ा। मैं और तू में आकर्षण आदि। माया का वर्णन भी आसान नहीं है। परन्तु संक्षिप्त में, मैं और तू है, और ज्ञान में न मैं है और न तू है केवल परमपिता परमात्मा है। उसको वर्णन करने में ही व्यक्ति फँस जाता है। तो वो दोनों जीव कुछ समय तक तो आनंद रूप, आत्म–आनंद में रहे, परन्तु एक दिन कहने लगे कि परमात्मा ने ये क्यों मना किया है कि इस वृक्ष का फल नहीं खाना। अंग्रेजी में कहते हैं, (Forbidden fruits are sweeter)। जिन बातों को या जिन फलों को मना किया जाए खाने के लिए, उनके लिए उत्सुकता उत्पन्न होती है, उनमें कुछ अच्छाई नज़र आती है। ये मनुष्य की बड़ी कमजोरी है। प्रत्येक मनुष्य की कमजोरी है। ये मन के पीछे लगता है। बहुत कम लोग बुद्धि के पीछे लगते हैं और बहुत ही कम लोग अपनी आत्मा को परमात्मा में लय रखकर जीवन व्यतीत करते हैं, बहुत ही कम। तो आपस में बात की है। क्या हो जाएगा अगर फल खा लेंगे तो क्या हो जाएगा – हम तो आत्मस्वरूप हैं ? तो फल खा लिया, परिणाम क्या हुआ ? उनकी स्थिति, जो आत्मा की स्थिति थी, आत्मा की स्थिति से हटकर मन के स्थान पर आ गई। एक स्त्री थी एक

Scanned by CamScanner

पुरुष था। वो मन के स्थान पर जाने से ही एक दूसरे के प्रति भाव उत्पन्न हो गया। लगे अपने आपको ढ़कने के लिए। परमात्मा का 'एम्बैसेडर (Ambassador) आकर पूछता है कि हे आदम! तुमको किसने कहा था कि ये फल खाना। हाँ, हम भी मन के पीछे लग जाते हैं, लगे हुए हैं और हम सब दुखी हैं। प्रत्येक व्यक्ति के भीतर में आत्मा है, परमात्मा की अंश है, परमात्मा है। आत्मा परमात्मा एक ही है। आत्मा के ऊपर जो आवरण है शरीर, प्राण, मन बुद्धि, आनंद का। उसके कारण हम समझ रहे हैं कि हम परमात्मा से पृथक हैं। वास्तव में आत्मा-परमात्मा एक है। वास्तव में हम दोनों जीवों की तरह, आदि में जो उनकी उत्पत्ति हुई थी, उनकी तरह हमारा भी रूप वो ही है, परन्तु हमने मन के कारण अपने आपको ईश्वर से दूर कर लिया और इसी कारण हम सब दुखी हैं। दुखी का मतलब है, दुख-सुख दोनों में फँसे हुए हैं, ये माया है। परमात्मा में पुनः लय होने के लिए दो रास्ते हैं। भक्ति का और ध्यान का। तो जैसे-जैसे अतीत के संस्कार होते हैं व्यक्ति वो रास्ता अपनाता है, और महापुरुष दोनों को ही मान्यता देते हैं। खण्डन नहीं करते किसी रास्ते का। ये खण्डन-मंडन मन का है। कोई ज्ञानी कहे कि भक्ति ठीक नहीं है, तो उसने ज्ञान समझा नहीं है। ज्ञान में होता क्या है, केवल आत्मा ही आत्मा, आत्मा। उसमें अपेक्षा है ही नहीं बुराई-भलाई की। वो कैसे कह रहा है कि ये बुरा है, भला है। तो उसने अभी तक ज्ञान को समझा ही नहीं। वो अभी मन और बुद्धि के पीछे लगा हुआ है, तर्क-वितर्क के पीछे लगा हुआ है। भक्ति का मतलब है व्याकुलता। बच्चा है, नन्हा सा

Scanned by CamScanner

बच्चा है, माँ किसी कारण उस बच्चे को घर में छोड़कर बाहर चली जाती है थोड़े समय के लिए। बच्चे की नींद खुल जाती है। उसको भूख जल्दी लगती है। उस बच्चे की स्थिति देखनी चाहिए, वो कैसे रोता है, कैसे व्याकुल होता है, कैसे तड़पता है। इस बच्चे की, इस सरल बच्चे की सरलता आनी चाहिए, उसकी व्याकुलता, माँ उसे नहीं मिलती, पड़ोसी उसको उठाते हैं परन्तु उसका रोना बन्द नहीं होता है। बात तो एक ही होती है। प्रत्येक व्यक्ति का जो बाहर से जिस्म है वो एक जैसा ही होता है। वो लोग बच्चे को खाने–पीने की चीज़े भी देते हैं, खिलौने भी देते हैं परन्तु उसको संतुष्टि नहीं होती है। परन्तु जैसे ही माँ आती है वो उसको उठाती है वो बिल्कुल शान्त हो जाता है। तो संसार के कितने ही पदार्थ क्यों न हमें रोचक दिखें, हमारा मन उसमें फँस जाता है, परन्तु संतुष्टि नहीं होगी, जब तक हमको भगवान, परमपिता परमात्मा हमको मिल न जाए। भक्त का ये लक्ष्य है। तो आगे जाके इस प्रकार की भक्ति ज्ञान का रूप भी धारण कर लेती है, और ज्ञानी भी, जैसे भगवान कृष्ण, कभी ज्ञानियों से बातचीत करते हैं, कभी भक्तों से बातचीत करते हैं, उनमें दोनों रूप थे, भले ही उद्धव जी के अहंकार को ढ़ीला करने के लिए, प्रेम की जीवित मूर्तियों के पास, गोपियों के पास भेजा उनको। कुछ भी हो ये कहना कि भगवान ज्ञान स्वरूप नहीं थे, ये गलत होगा। वो अहंकार नहीं चाहते थे, चाहे कोई प्रेमी हो, दोनों में अहंकार से दूर रहना चाहिए। इसीलिए भक्ति में दीनता है। ज्ञानी में दीनता अपने आप आ जाती है। किताबें पढ़ लीं बस वो समझता है कि मुझे सब कुछ (knowledge) ज्ञान हो गया, सब

Scanned by CamScanner

कुछ ज्ञान हो गया वो कुछ नहीं है। सच्चा ज्ञानी वो है जो आत्म–स्थित हो गया। अपनी आत्मा को परमात्मा में विलय कर चुका है। वो गुण–अवगुण दोनों से मुक्त हो गया। और सच्ची भक्ति जो है वो बच्चे, शिशु का जो व्यवहार है वो कुछ–कुछ उसके अनुसार है और उस व्याकुलता से, कि किस प्रकार अपने प्रीतम को रिझायें। भक्ति में एक साधन नहीं है, भक्ति में व्याकरण नहीं है, भक्ति में (Arithmetic) ये चीजें नहीं है, सरलता है, दीनता है, एक ही लक्ष्य है कि मेरा प्रीतम किसी तरह रीझ जाए मुझसे। मैं जिस रूप में उसकी साधना कर रहा हूँ उस रूप में प्रकट होकर वो मुझे अपनी चरण रज बना ले। तो भूलकर भी हमारे सत्संगियों को तर्क–वितर्क में नहीं पड़ना है। दोनों मार्ग भक्ति का और ज्ञान दोनों का आश्रय लेना चाहिए। विशेषकर आज सिर्फ हमारे यहाँ संतमत में या गुरुमत में, गुरु ही हमारा आश्रय है और गुरु ही हमारे कह रहे है कि हम दोनों को श्रद्धा से अपनाते हैं, ये नहीं की बुद्धि से ही अपनाते हैं, मानते हैं। नहीं श्रद्धा से अपनाते हैं। और दोनों रास्ते पर चलते हैं। प्रेम को अपनाते हैं और ज्ञान को भी अपनाते हैं। संक्षिप्त में प्रार्थना करना, भजन पढ़ना ये भक्ति का साधन है। और जो मौन होकर बैठते हैं ये ज्ञान का साधन है। ज्ञान में अपनत्व को बिल्कुल खो देना है। मैं और मेरेपन को खो देना है। और इस मौन में कुछ नहीं रह जाए केवल परमपिता परमात्मा रहे। मैं, मेरापन खत्म हो जाए। अभी मंजिल हमारी दूर है। परन्तु समझ लेना चाहिए अच्छी तरह से कि मौन के अर्थ क्या है। लोग–बाग कहते हैं कि बड़े विचार आते हैं। जितना मौन करते हैं उतने अधि

Scanned by CamScanner

ाक विचार आते हैं। अभी मौन हमने समझा नहीं है। मौन; शरीर का भी मौन है, मन का भी मौन है, बुद्धि का भी मौन है, ज्ञान उसका भी मौन है। उसके बाद आनंद आता है, उसका भी वो ही रूप है उससे भी निवृत्ति है। किसी के साथ आसक्ति नहीं है। किसी के साथ अपना बंधन, अपने आपको बंधन में नहीं डाल दिया है, उससे भी आजाद है। बुद्धि से भी आजाद है। आनंद से भी आजाद है। आगे चलकर, क्या है वो ? परमात्मा ही जानता है। मौन का ही रास्ता हमारा आगे का रास्ता है। संसार के विचारों को छोड़ो। संसार से, जो हमारे जो बंधन है, उनसे त्याग करो। फिर आएगा कि, परलोक के विचार आऐंगे, कि परलोक में बड़े सुख मिलते हैं। भगवान कृष्ण ने भी परलोक के कितने रूप दिखायें हैं। हमारा वो लक्ष्य नहीं है। उन विचारों को भी छोड़ना है। तत्पश्चात् परमात्मा का विचार आएगा। उन विचारों को भी छोड़ना है। फिर छोड़ने का विचार आएगा। तर्क-वितर्क छोड़ने के विचार को भी छोड़ना है। वो मौन है वो मौन धीरे-धीरे प्रगाढ़ मौन होता हुआ आत्मिक मौन हो जाएगा। आत्मज्ञान हो जाएगा, परमात्मा का रूप हो जायेगा। ये रूप हो जाएगा, ये कुछ नहीं कहा जा सकता, इसका अनुभव करके ही जबान कट जाती है। वर्णन करते हैं तो मन और बुद्धि के स्थान पर आ जाते हैं। बूंद सागर में मिल जाती है, सागर रूप हो जाती है। इसके आगे एक और मंजिल है। मगर वो केवल महापुरुषों को प्राप्त होती हैं। वो हमारा उद्धार करने के लिए, वो महान शक्ति से पृथक होकर यहाँ सांसारिक रूप धारण करके हमारी सेवा करते हैं। वो बहुत ऊँची अवस्था है। तो

Scanned by CamScanner

साधना में दोनों को अपनाएं, मौन साधना को भी दृढ़ करें तथा अपने जीवन को ईश्वरमय बनाइये, ईश्वरमय बनाएं। ईश्वर का क्या रूप है? गुण क्या है, क्षमा, क्षमा, क्षमा। और किसको क्षमा करना है। अपनों को तो क्षमा करना, हो सकता है सरल हो, वो भी बड़ा कठिन है। परन्तु जो हमारे जानलेवा हैं, हमारे शत्रु हैं, उनको क्षमा करो। हज़रत ईसा कहते हैं (Forgive seventy times seven) इसका मतलब है हज़ारों बार क्षमा करना पड़े तो क्षमा आपका स्वरूप बन जाए, लोग–बाग आपको पीटें, आप क्षमा करते चले जाएं। प्रेम, परमात्मा प्रेम स्वरूप है, अप्रयास, सबसे प्रेम करें। प्रेम में सेवा भी आ जाती है। प्रेम में सहायता भी आ जाती है। प्रेम में बलिदान आ जाता है। परमात्मा का स्वरूप जो है, आत्मा का जो स्वरूप है, आपका वास्तविक स्वरूप है, वो प्रेम है। ज्ञानी का भी, भक्त का भी, दोनों का ही स्वरूप प्रेम है। विचार, मन, बुद्धि और व्यवहार से प्रेम अपने–आप विकसित हो जाएगा। मनुष्य सहज रूप में, प्रेम रूप बन जाएगा। सहज। इसलिए हज़रत ईसा कहता है कि एक तरफ कोई थप्पड़ मारे तो दूसरा गाल आगे कर दो, दूसरा थप्पड़ ले लो। ये कैसा प्रेम? कोई हमारी हानि करे और हम उसकी सेवा करें। फ़रीद जी कहते है कोई तुम्हें मारे–पीटे, मुक्का मारे तुम उनके घर जाकर उसके पाँव दबाओ। आप कहेंगे कि ये कैसी साधना है? ऐसी साधना करनी होगी, जब तक हम ऐसी साधना नहीं कर पायेंगे, तब तक हम किनारे पर कंकर चुनते रहेंगे। सेवा, तन–मन–धन की सबके लिए, अपने बच्चों के लिए, बीबी के लिए, पति के लिए, नहीं उनकी सेवा तो करनी

Scanned by CamScanner

है, परन्तु संसार ही ईश्वर का रूप है, सारे संसार की सेवा करनी है, और ये मुख्य गुण मनुष्य के भी होने चाहिए। सेवा भी एक साधन है भक्ति का। प्रेम भी एक साधन है, भक्ति का। ज़रूरी नहीं है कि आँख बन्द करके ही या कोई और जाप करके परमात्मा की सेवा करनी है, नहीं। ये सेवा एक महान साधन है। हनुमान जी ने क्या किया? भगवान की सेवा की। प्रत्येक व्यक्ति का, कोई-न-कोई महापुरुष उसका लक्ष्य होता है, तो बच्चे या बड़े उसके आधार पर चलना चाहते हैं। उसके जीवन का अनुसरण करना चाहिए। हमारे यहाँ राम, भगवान कृष्ण, भगवान शिव, महापुरुष संतों में कोई गुरु नानक को मानता है, कबीर को मानता है, कोई भेद नहीं है, सब ठीक है। कभी ये नहीं कहना चाहिए वो उसको मानता है, मैं उसको मानता हूँ, मैं उसके हाथ का खाना नहीं खाऊंगा, ये सब गलत बाते हैं। भक्ति को समझा ही नहीं। वो हमारा ईष्टदेव सर्वव्यापक ही है। वो सबका है, वो मेरा नहीं है सबका है, हम ये कह दें कि परमात्मा केवल मेरा ही है, कितनी बेबकूफी है। वो सबका है। इस तरह हमें भी सबका सेवक बनना चाहिए। परमात्मा सबकी सेवा करते है और सेवा करता थकता नहीं है। हमें थकावट आ जाती है। तो अभी हम योग्य नहीं बने हैं। कमजोर हैं।

Scanned by CamScanner